समर्पण

भाभी

"माया गुप्ता"

को

उनके शुभ विवाह के अवसर पर
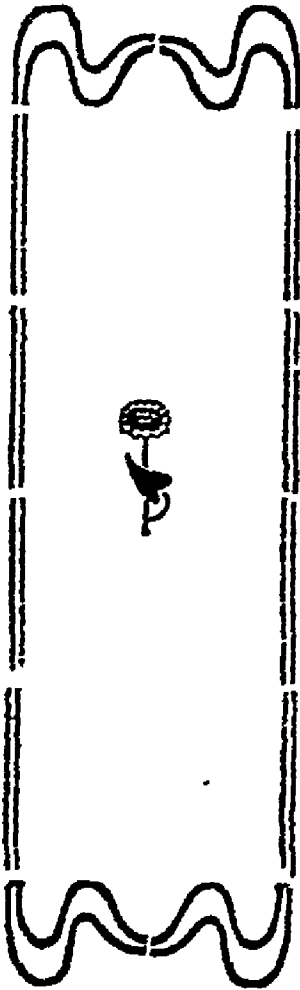
मनमोहन गुप्त

कुछ कहना है

जब भारतीय वर्त्तमान इतिहास की ओर मैं दृष्टिपात करता हूँ तो मनमोहन भइया को सब जगह पहुँचा हुआ पाता हूँ। क्या राजनीतिक क्या सामाजिक सभी बातों में हम मनमोहन भइया को परिपक्व पाते हैं। मनमोहन भइया का राजनीति में एक प्रमुख स्थान रहा है और भविष्य में भी शायद वे भारतीय राजनीति की सेवा इससे और अधिक लगन के साथ करते रहेंगे। आप प्रमुख क्रांतिकारी तथा काकोरी केस के अभियुक्त श्रीयुत मन्मथनाथ जी गुप्त के सहोदर भ्राता हैं। इस समय तक की ३२ वर्ष की अवस्था में आप १६-१७ वर्ष तक जेल की चहार दिवारियों के अन्दर बन्द रहे। मनमाड बमकांड से भी आपका घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। अभी हाल ही में आप देवली कैम्प जेल से छूटे हैं।

इतना ही नहीं भारतीय राजनीति के अलावा हम मनमोहन भइया को साहित्य में भी एक उच्च स्थान पर देखते हैं। समय समय मुझे आप के लेख और कहानियाँ समाचार पत्रों में देखने को मिलते थे। अभी 'आज में आप की कृति, पाकिस्तान भावना की शव परीक्षा, देखने को मिली थी परन्तु इन सबों से यह पुस्तक 'अन्तिम दर्शन' अलग है। इस पुस्तक की कहानियाँ अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। ये कहानियाँ बिल्कुल साधारण भाषा में लिखी गई हैं जिन्हें साधारण मनुष्य भी बाखूबी समझ सकता है। मनमोहन भइया की इसमें छः कहानियाँ हैं। इन कहानियाँ में एकचोट है। इन कहानियों के अन्दर एक भावना, एक लक्ष्य है जो हमें अपने कुछ वस्तुओं की याद दिलातीं हैं जिन्हें हम प्रायः भूल चुके हैं।

जयहिन्द

विश्वम्भरनाथ गुप्त

विषय-सूची

अन्तिम दर्शन

साल या दो साल की सजा हो तब भी कैदी को आशा रहती है कि वह बाहर जाकर दोस्त या दुश्मन जिसको जिस अवस्था में छोड़ आया है उसे उसी अवस्था में पाएगा, किन्तु किसन के लिए ऐसी कोई आशा न थी, कारण उसे तो आजीवन कालेपानी की सजा थी। छूटा, पूरे पन्द्रह साल के बाद।

पूरे पन्द्रह साल काट कर किसन जब बाहर निकला तो उसके मन में सबसे पहला प्रश्न यही उदय हुआ कि वह जाय तो कहाँ। पिछले दस साल से घर से कोई सम्बन्ध भी न था। शायद जेल वालों से किसी बात के लिये झगड़ा होने के कारण उसके चिट्ठी पत्री भी तब से बन्द कर दिये गये थे, मुलाकात की कौन कहे।

किसन जब अठारह साल का छोकरा था उस समय गुस्ताखी के मारे किसी अपने साथी को सिर्फ तीन मिनट के बहस-मुबाहसे के बाद ही मार डाला था। फिर फाँसी से बचकर आज पन्द्रह साल के बाद बोर्ड की कृपा से वह बाहर निकला।

कैदी जब तक छूटता नहीं है तब तक उसके दिल में बाहर जाने की प्रबल इच्छा होनी स्वाभाविक है। किन्तु अनाथ कैदी के लिये बाहर आते ही अंधेरा। जहाँ जेल में खाना न खाने पर दफा बावन का मुकदमा चलता है वहाँ बाहर न खाने पर भी कोई पूछने वाला तक नहीं रहता। खाओ, न खाओ, तुम किसके क्या लगते हो। अधिकांश ऐसे ही खाने

को नहीं पाते, और जो लोग पाते भी हैं उन्हें दूसरों के लिये फिक्र ही क्या। जो पाते हैं वे तो समझते हैं कि पूर्व जन्म के करम् के फल, जो नहीं पाते, वे हैं किस्मत के सौतेले भाई। चलो छुट्टी भई, आगे सोचने की जरूरत ही क्या? जैसा राम रचि राखा। इसी में सन्तोष मानो तो भला, नहीं तो बलासे।

किसन बेचारा भी किस्मत का सौतेला भाई बने किसी हालत से गिरते पड़ते जिस जगह से गिरफ्तार हुआ था वहीं पर जा पहुंचा। बिना मूँछ दाढ़ी का किसना जब ढाई ढाई फुट के दाढ़ी बाल लेकर गांव में घुसा तब सामने वाले आम के पेड़ के नीचे जो बच्चे गुल्ली-डंडा खेल रहे थे वे तितर-बितर हो गये। सोचे होंगे कि हो-न-हो कोई लड़कों को पकड़ कर झोली में भर कर ले जाने वाला आ गया।

गाँव के अन्दर लड़कों के पहुँचते ही घर घर खबर पहुँच गयी—कोई इत्ता बड़ा...जिसकी इत्ती बड़ी दाढ़ी...सरपर इत्ते बड़े बड़े बाल...बिल्कुल अंगार जैसी आँखें...यह लम्बा सर ताड़ के पेड़ को छूता हुआ...बिल्कुल दानो, दानव जैसा, नसक जैसा झोला लिये...एकदम.. एकदम गांव के अन्दर घुस आया है।

माताओं ने अपने अपने बच्चों को सम्हाला।

उस समय गांव के किसान लोग अपने अपने खेतों में काम करने गये थे। ढूँढ़े किसन को एक भी मर्द या बच्चा न मिला। आखिर कुँआ के जगत पर आश्रय लेना पड़ा। अन्दाज लगाया, शायद इसी जगह पर पहले उसका घर था। पुरानी बातें याद कर कर उसकी आँखें भर आई। अम्मा थी, बापू थे...और अब, जब मेरे घर की जगह पर कुँआ बन गया है तो जरूर, जरूर दोनों मर गये। अहा,

अम्मा कितनी अच्छी थीं। जब पुलिस वाले मुझे हथकड़ी डाले ले जा रहे थे तो अम्मा कैसे सर धुन धुन कर रोती थीं। जब मुझे जज ने फांसी का हुकुम सुनाया था तब बाबू कचहरी में ही कैसे बेहोश हो कर गिर पड़े थे। निर्दयी, निष्ठुर, बिल्कुल जानवर जैसे पुलिसवालों ने एकबार के लिये भी मुझे बाबू जी के पैर छूने के लिये हुकुम न दिया था। सोचते सोचते एक लम्बी सांस ली। आँखों के आगे अँधेरा छा गया।

इतने में उसके कानों में आवाज आई। आँसू पोंछ कर सामने देखा तो एक बुढ़िया डांट रही थी—तू कौन है रे? तुझे शर्म नहीं आती...यहाँ कुँआ पर आकर बैठा है! चल यहाँ से! उठ यहां से! भाग यहां से!

किन्तु किसना टस से मस न हुआ। उल्टा आँखें पोंछ कर भली भाँति बुढ़िया की ओर देखने लगा। बुढ़िया की डाट के अन्दर से उसे जो आत्मीयता का अनुभव हुआ क्या वह सच है, सही है! आँखें फाड़ फाड़ कर बुढ़िया के मुँह की ओर देखने लगा। बुढ़िया डर गई। पीछे हटी। सोचा, क्या यह आदमी पागल भी है। इधर उधर देखा। आस पास और कोई दिखाई न पड़ा। इतने में किसन ने कुछ कहा। बुढ़िया को सुनने को फुर्सत न थी। इधर किसन भी हिला।

बुढ़िया ने सोचा, हो न हो यह कोई पागल है।

फिर क्या था। पगला कहीं बेइज्जत न कर देवे, काट न खाय...इसके बाद भी कहीं वहां पर रुका जा सकता था? अरी दइया री! अरी मइया री! मार डाला री! कहती, कूदती, फांदती, चिल्लाती, चीखती हुई बुढ़िया भागी। चारो ओर के मकानों के दरवाजे फटाफट बन्द हो गये।

किसन अवाक हो खड़े खड़े देखने लगा। सोचा—क्या इस गांव का किसना तीन मिनट के वहस के कारण ऐसा खतरनाक हो गया! केवल तीन मिनट के वहस के कारण ऐसा खतरनाक हो गया? केवल तीन मिनट की वहस के वाद किसना ने जो कुछ किया था उससे वह बिल्कुल वदल गया है? अपने हृदय को टटोला, उल्टा अपने को और कमजोर पाया। तब दुनिया उसे क्यों इतना जबरदस्त समझती है? ओर छोर न मिला।

खेत पर से थके-मादे किसान लोग जब घर पहुँचे तब उन्हें पता चला कि घरों में आज खाना नहीं पका।

कारण? कारण तो साफ ही था। गाँव में पागल आकर औरतों पर हमला बोले; भला औरतें वाहर आतीं कैसे? न बाहर निकली न खाना पकाई, हाँ, जिनके घरों में थोड़ा बहुत बासी पानी वच गया था, वे फुल्का, अधिक से अधिक दाल या छाँछ विलो कर रक्खी थीं।

थके माँदे भूखे किसानों को खाना न मिलने पर जो बातें होनी जरूरी थीं, हुईं वे ही। सब किसान इकट्ठे हो कर लै लै लट्ठ निकल पड़े शत्रु का निपात करने। जब रण के मैदान में, अर्थात् कुएँ के सामने आये तो देखा पगला सो रहा है। घंमा घम वरसने लगी।

किसना दिन भर का भूखा तो था ही। सोचते सोचते कब उसकी आँखें लग गई थीं वह स्वयं ही न जान पाया था। सोचा था कि शायद गांव के किसान खेत से वापस आएंगे तो कोई न कोई उनमें से जान पहिचान वाला मिलेगा ही। फिर खाना पीना भी होगा।

किसन, मार खाने का क्या कारण है, समझ न सका।

फिर जब एकदम हमला हो ही गया तो उसके लिये आत्म रक्षा करना जरूरी था। एकदम पैंतरा भाँज कर खड़ा हो गया। प्रथम प्रचेष्टा में ही एक की लाठी हाथ लगी। फिर क्या था। सब लोग भाग खड़े हुए। गाँव में सनसनी फैल गई चारो ओर से आवाजें आने लगी 'अरे भाग् रे भाग्! पगले नें लाठी छीन ली!'

छिपकर एक आदमी गाँव के माई बाप के पास पहुँचा। उस दिन शायद गाँव के माई बाप गाँजा की मात्रा कुछ अधिक चढ़ा गये थे, इस कारण वे घण्टों से चमेलिया चमाईन के दरवाजे पर बैठकर उसको लैला-मजनू की कहानी सुना रहे थे। गाँव के आदमी के मुँह से पगले की बात सुनते ही पगड़ी सम्हाल कर गरज उठे। लोगों को आश्वासन देने के नाम पर बोले 'जाओ जाओ तुम आगे बढ़ो। रूस्तमसिंह चौकीदार के रहते गाँव में किसकी हिम्मत है कि गुण्डई करे!' कहकर चमेलिया की ओर देख कर एकबार और गरज कर मूछों को एंठते हुए बोले साला गुण्डा बनकर आया ....'

किसान ने हाथ जोड़कर अनुनय करते हुए कहा, 'हजूर माई बाप हैं .....आप जो चाहें सो कर सकते हैं......मगर वह है बड़ा बदमाश.......सारे गाँववालों को एक ही बार लाठी का पैतरा दिखा कर भगा दिया है। दिनभर औरतों को पानी भी भरने नहीं दिया बिल्कुल पागल है।'

'कहता हूँ! साला...वहाँ पर चल...मैं भी जाता हूँ....तूने अभी रूस्तमसिंह की लाठी को नहीं पहचाना.. जाकर उस साले से बता देना कि अभी रूस्तमसिंह लाठी लिये आ रहे हैं...। समझा? उससे कह देना।'

किसान कुछ समझा हो चाहे न समझा हो'

रूस्तमसिंह को नाराज होते देख कर पीछे हटा। धीरे-धीरे घर का रास्ता लिया। पीछे लौट कर देखने को भी उसमें हिम्मत न थी।

उसका हटना था कि चार आखें हुई। चमेलिया बोली 'होगा। तुम्हें क्या। अन्दर चल कर लेट जाओ। फिर सवेरे जाकर देखना'।

रूस्तमसिंह यही चाहता था प्रस्ताव चमेलिया का ही था। पूर्ण विजय। रूस्तमसिंह अन्दर हो लिया। धीरे से बोला 'दरवाजा बन्द कर दे। नहीं तो साला पगला है कहीं इधर ही आ जाय तो'।

चमेलिया ने भी दरवाजा बन्द कर दिया। गांव के माई बाप ने चमेलिया के बिस्तर पर आश्रय लिया। फिर मूछों को ऐंठते हुए बोले 'एक बार जाना अच्छा था.. कम से कम दस बीस गांव के लोग जान तो जाते कि सारा गांव एक ओर और रूस्तमसिंह अकेले एक ओर। जिस काम को सब लोगों ने मिल कर नहीं कर पाया था उसे रूस्तमसिंह ने एक डाँट में कर दिया।'

चमेलिया रूस्तम के साथ सट कर बैठते हुए बोली 'क्या जरूरत। ऐसे ही तुमको सब लोग जानते हैं। उस दिन हेरिया चमार के बगीचे से दो ठो अमिया चटनी के लिये लाने के लिये गई थी जाकर तुम्हारा नाम लेकर मांगते ही उसने झउआ भर आम बीन कर दिया।'

'देता कैसे नहीं। नहीं देता तो दूसरे दिन उसका सारा बगीचा उजाड़ कर छोड़ता...मैं रूस्तमसिंह हूँ...साला हेरिया क्या नहीं जानता है कहते कहते रूस्तमसिंह जल्दी जल्दी मूछों को ऐंठने लगा।

× × × × ×

दूसरे दिन दस बजे के करीब दरोगा साहब साथ में सात आठ सिपाही को लेकर आये। बिना खाये पीये थका मान्दा कूएँ की जगत् पर जहाँ किसन बैठा था, दारोगा साहब सीधे वहां पर पहुंचे। पिस्तौल तान कर बोले 'अबे जहां बैठा है वहीं बैठा रह नहीं तो तेरा सिर उड़ा दूँगा'। किसन ने उठ कर सलाम किया।

'पगले का अभी मिज़ाज अच्छा होगा' कह कर दारोगा ने सिपाहियों को इशारा किया। दो सिपाहियों ने आगे बढ़कर हथकड़ी लगा दी। किसन कुछ समझ न पाया। आँखें फाड़ फाड़ कर गाँव वालों के मुँह की ओर देखने लगा। गाँव वाले बड़े खुश थे। बार बार दारोगा का शुक्रिया अदा करने लगे।

यह सब देख कर किसन हक्का बक्का सा बन गया। उसके मुंह में जैसे किसी ने ताला लगा दिया हो। एक बात भी न निकली। एक सिपाही ने उसे अपने घोड़े के पीछे बाँध दिया। सब लोग खुशी के मारे हल्ला कर उठे। घोड़ा भड़क कर उछल उठा, फिर एक झटके से सिपाही के हाथ से लगाम छुड़ा कर भागा। किसन हाथ बंधे कुछ दूर तक घोड़े के पीछे पीछे भगा। ठीक जहाँ पर गाँव की सीमा खतम होती है वहीं पर किसन को एक ठोकर लगी। वह मुंह के बल गिर पड़ा।

दस कदम! हाँ दस कदम भी और आगे न गया होगा। इतने में एक सिपाही ने अपना घोड़ा दौड़ा कर आगे से आकर उस घोड़े को पकड़ लिया। किन्तु इसी दस कदम के अन्दर ही किसन का कुल करम हो गया था। तब तक दारोगा भी ने पहुंच गया। ऊपर से दो चाबुक किसन को जमाते हुए दारोगा कहा 'साला नखरा करता है'।

रुस्तमसिंह भी तब तक भागते हुए वहाँ पहूँच गया था किसन को एक लात जमाते हुए बोल उठा 'साला, कल रातभर मुझीको न लाठी का पैंतरा बता रहा था।'

इतने में एक बुड्ढे सिपाही ने कहा 'ठहर! ठहर! गदहे! देखता नहीं, उसके मुँह से खून आ रहा है। बुड्ढे सिपाही की डाट सुनते ही रुस्तमसिंह 'हुजूर, हजूर,' कहते हुए पीछे हटा तब तक बलबला कर किसन खून की उल्टी करने लगा।

गाँव वाले सब कुछ भूल गये। एक पानी लाने के लिये गाँव की ओर दौड़ा। बाकी लोग वहीं खड़े खड़े एक दूसरे के मुँह की ओर देखने लगे। दारोगा ने भली भाँति अवस्था की परीक्षा की। अवस्था गम्भीर है समझने में देर न लगी। मन ही मन कुछ सोचा। फिर एकदम आग बबूला होकर गाँववालों की ओर फिर कर कहा 'साले देख क्या रहे हो। इस पगले की ऐसी हालत के लिए तुम लोग जिम्मेदार हो। ..साले! हल्ला क्यों किये?

गाँव वालों का चेहरा फक पड़ गया। एक एक कदम पीछे हट गये। इतने में दारोगा ने डांटते हुए कहा 'साले! भाग कहाँ रहे हो! इस हत्या को क्या मेरे सर मढ़ना चाहते हो।.... उठा इसे। ले जा अपने गाँव में! मर गया तो सब लोगों को फाँसी चढ़ा दूँगा!' कहते ही कहते धपाधप दो तीन किसानों के पीठ पर घूँसा जमा दिया। साथ साथ रुस्तमसिंह एक किसान का गला पकड़कर किसन की ओर ढकेलते हुए बोला 'उठा कर ले चल गांव के अन्दर।'

सभी सिपाही गांववालों के पीठ में घूम कर एक एक घूँसा जमाते और किसन की ओर ढकेलते हुए कहने लगे, 'उठा उसको। देख क्या रहा है।'

मिनटों में किसन की हथकड़ी खुल गई। किसन सबके कन्धे पर चढ़ा दिया गया। फिर किसन को ढोकर गाँववाले भुवन चाचा के चबूतरे पर लाकर रक्खे। उधर दारोगा, सिपाही, चौकीदार सब खिसक पड़े।

कल। कल भी नहीं, आज सवेरे भी जो किसन एक बूँद पानी के लिये तरस रहा था अभी उसके दाँतों में दाँत लग जाने के बावजूद लोग लोटा भर भर पानी उसके मुँह में डालने लगे। दाँतों के दरार से शायद एक आध बूँद अन्दर भी गयी होगी। किसन ने मुँह फाड़ दिया।

लोग कहते हैं कि पानी का कोई स्वाद नहीं है, किन्तु उस समय किसन का मुँह फाड़ना देखकर कोई भी इसे माने बगैर नहीं रह सकता। किसन ने खूब पेट भरकर पानी पिया। उसकी आँखें खुल गईं। उसने देखा कि वह किसी मकान के चबूतरे पर पड़ा है; बहुत से लोग उसे घेरकर खड़े हैं। यद्यपि सभी होशियार थे कि कहीं पगला उठकर मारना या काटना शुरू न करे।

इतने में किसन ने कहा—"मेरी अम्मा कहाँ"? सब लोग पीछे हटे।

किसन ने कहा—"भाई मैं पागल नहीं हूँ। मैंने कल अपनी माँ को देखा है। वह कूएँ पर आई थी। उससे कह दो कि तेरा किसन सजा काट कर आ गया"।...आगे कुछ कहते न कहते किसन के मुंह से बलबला कर खून निकला। पास ही पीछे भुवन चाचा बैठे तम्बाकू पी रहे थे। 'किसन' कान में जाते ही वह हुक्का फेंक कर भाग करके किसन के पास आये। जोर से घोषणा करने के रूप में बोल उठे 'किसना! किसना आया! अरे मेरा किसन आया'! कहते ही कहते वह किसन

को छाती से लगा लिये। सारे गाँव के कान खड़े हो गये। एक लड़का भागता हुआ भुवन चाचा के घर के अन्दर दौड़ा। लड़के के मुँह से 'चाची, वह पगला किसन भइया है' निकला था कि किसन की माँ 'अरे मोरे लल्ला ! अरे मोरे बच्चा' कहती हुई बाहर की ओर भागी। एकदम आकर किसन के छाती पर गिर पड़ी। हृदय से लगा ली। किसन ने स्नेह स्पर्श का अनुभव किया। आहिस्ते आहिस्ते आँख खोल कर धीमी आवाज से बोला 'अम्मा'।

'हाँ, बेटा मैं हूँ ! मैं आ गई !...हाय हाय क्या होगा' ! कहते कहते अपने सर को किसन के छाती पर दे मारा। 'मैं अभागिन कल नहीं पहचानी।...मुझे क्या पता था कि राजा है...है ...। जब मैं मुलाकात करने गई थी तो जेलवालों ने झूठ-मूठ कह दिया था कि....वह अब नहीं रहा हाय हाय' !

कल जिस बुढ़िया को 'अम्मा' कहकर पुकारने पर वह भाग खड़ी हुई थी आज उसी के गोद में सर रख कर किसन अन्तिम सांस ले रहा था। बुढ़िया अपने को कोसती जाती थी 'हाय मैंने कल क्यों नहीं पहिचाना'।

लोग कितना ही सान्तना देते थे, 'चाची घबड़ाओ नहीं' बुढ़िया का दिल नहीं मानता। केवल एक आध बार जब किसन कहता 'अम्मा' तब वह शान्त होती।

इतने में किसन ने एकबार और खून की उल्टी की। सब लोग घबड़ा गये। आस पास के गांवमें न कोई वैद्य न डाक्टर। फिर भी शहर के लिए एक आदमी को घोड़े पर भगाया गया था। लोग असहाय जैसे दूध का लोटा या पानी का लोटा लिये खड़े थे। इतने में किसन एक चुल्लू खून मुँह से फेंकता हुआ बोला 'अम्मा'।

बुढ़िया और नजदीक सरक आई। मुँह के पास मुँह लाकर आंखों में आंख गड़ा कर जब उसने पुकारा 'बेटा !'

तब बेटे ने अन्तिम सांस ली। बेटे की आंखें और खुल गई। मालुम यह हो रहा था कि बेटा अपनी अम्मा का अन्तिम दर्शन कर रहा है !!!

मुर्झाया फूल

मृणाल ने जिस दिन सतीश से कहा कि अब तो किसी भी हालत में गाड़ी आगे नहीं चलती, केवल उसी दिन सतीश का ध्यान भंग हुआ। उसने मन में सोच लिया बस अब नहीं जैसे भी हो उसे यह कविता करने वाली आदत छोड़ ही देनी पड़ेगी। अन्यथा मृणाल की ही क्या होगी। धीरे धीरे वह भी तो इस जीवन से थकी जा रही है।

सतीश कन्धे पर अपना कुर्त्ता रख कर घर से निकला। शायद उसे यह ध्यान न था कि आजकल के जमाने में यदि कोई कन्धे पर कुर्त्ता रख कर बाहर निकलता है तो उसे लोग पागल समझते हैं। वह चलता

रोज सतीश जैसे कितने ही कपड़ों के अभाव के कारण नंगे बदन सड़क पर भटका करते हैं, उसे कौन देखता है। सतीश को भी किसी ने न टोका। जान पहिचान वाला कोई रास्ते में मिल जाता तो शायद टोकता भी। परन्तु उस दिन कोई वैसा मिला ही नहीं तो टोकता कौन। वह चलता ही गया।

वह चलते चलते एकदम शहर के बाहर आ पहुँचा। सामने नर्मदा अपने मन से गीत गाती हुई इठलाती चली जा रही थी। नर्मदा की मधुर तान ने उसे याद दिलाया कि वह कहाँ आ गया है। केवल इतना ही उसे याद आया था कि वह अन्यमनस्क हो गया। वहीं पर बैठ गया। नर्मदा ने शायद कोई ऐसी तान छेड़ी थी जिसे बिना नोट किये सतीश का काम नहीं चलता। उसने तुरन्त हाथ बढ़ाया। वह घर में तो था नहीं; नहीं तो मृणाल के रक्खे हुए कागज कलम हाथ आते। फिर भी तो कुछ हाथ आया ही; जो कुछ हाथ आया वह था एक गिट्टी। उसने गिट्टी को उठा लिया किन्तु लिखे तो कहाँ लिखे? आखिर गिट्टी के लायक कागज भी मिल गया। कारण, आस पास वैसे कागज की कमी थी नहीं, एक से एक पड़े हुए थे। धुले, साफ-सुथरे, मजे-घिसे। भले हो वे पत्थर के क्यों न बने हों।

सतीश ने लिखना शुरू किया। एक कोने से लिखता लिखता दूसरे कोने तक लिखता ही गया। परन्तु यह क्या, नर्मदा का गान तो समाप्त ही नहीं होता। अब लिखे तो कहाँ लिखे? कुछ अन्यमनस्क सा अपने मन में प्रश्न किया। ध्यान भंग हुआ। साथ साथ पटाक्षेप हुआ। मालुम पड़ा कि नर्मदा का गान भी बन्द हो गया। साथ साथ सब बातें याद आई। आई याद मृणाल, घर-द्वार याद आया और साथ साथ मृणाल की वह बात याद आई—अब न चलेगा। शिव! शिव! करने निकला था क्या और करने लगा क्या।

भगा। उल्टे पाँव वापस हुआ। समय काफी बीत चुका था। पहले सोचा कि घर को वापस चले। परन्तु मृणाल की वह विदा-वेला की दृष्टि याद आते ही झेंपा। सचमुच, बिना

कुछ प्रयत्न किये किस मुँह से घर को वापस होता। जहाँ तक नौकरी से सम्बन्ध है, सो काहे को न मिलेगी? क्यों न मिलेगी? एम. ए. पास किये हुए कितने ही लोग बड़ी बड़ी नौकरी करते हैं, नायेब मुन्सफ होते हैं और मुझे क्या बीस रुपये की भी नौकरी न मिलेगी? सोचते सोचते, हिम्मत बाँधकर सतीश आगे बढ़ा।

फिर प्रश्न उठा—आखिर मिले तो कहाँ मिले? सतीश तो सभी बातों से अनभिज्ञ है।

पहले निश्चय किया कि किसी स्कूल में जाय। अरे छे छे। गदहा पीट कर आदमी बनाना क्या उसके वश का काम है। पीछे हटा फिर सोचा कि कहीं कालेज में चलूँ। शिव! शिव! मनचले नवयुवकों को वश में रखना क्या उसके वश की बात है। उधर से भी मुँह मोड़ा। फिर कहा कि न हो तो चलो किसी दफ्तर में ही नौकरी ढूँढ़ो। हरे! हरे! उन रद्दी कामों के लिये उसकी लेखनी उठ कैसे सकती थी। इसी प्रकार से इधर उधर भटक कर आखिर किसी मासिक पत्र के सम्पादक के काम में जाकर वह रुका।

हाँ, हाँ, यही सब से अच्छा काम है। मजेमें एक शान्त कमरा मिलेगा। वहीं पर बैठ कर पत्र का सम्पादन करूँगा। फिर महीने के अन्त में बीस रुपये से कम क्या मिलेंगे। उतना ही पर्याप्त है। फिर मेरा तो कोई ऊपरी खर्च है ही नहीं। कागज कलम वहीं दफ्तर से मिलेंगी। केवल मृणाल, मेरा खाने का खर्चा, बीस रुपये में ही हो जायगा। मृणाल मेरी रानी है, यदि एक वक्त भी पेट भर कर खाने को पाएगी तो उसीसे वह सन्तुष्ट रहेगी। और मैं; देखी जायगी मेरी बात। आधे दिन तो इधर उधर साहित्य सम्मेलनों में ही पत्तल खाकर

चीतेंगे। जहाँ तक मेरे कपड़ों से सम्बन्ध है, उसका क्या, एक कौपिन से ही काम चल जायगा। उसे भी मासिक पत्र के मालिक से मांग लूँगा। वाह वाह क्या आनन्द हो जायगा।

सोचते सोचते अन्ततक सतीश एक मासिक पत्र के सम्पादक के सामने पहुँच ही तो गया। उस समय सम्पादक जी शायद किसी कविता को काट छाँट कर कविता का रूप दे रहे थे। चपरासी ने सामने वाली बेञ्च पर सतीश को बैठा दिया। सतीश ने सम्पादक जी को नमस्कार किया। यद्यपि उस समय सम्पादक जी को फुरसत नहीं थी तथापि उन्होंने ऊपर मुँह उठा कर देखा। बाद को हिकारत के स्वर में पूछा, 'क्या चाहते हो ?

थूँक निगलते हुए नम्रता के साथ सतीश ने कहा 'सम्पादक का काम'।

सुनते ही सम्पादक जी का चेहरा तमतमा उठा। 'क्या' कह कर, आँखें फाड़ कर उन्होंने सतीश को ऊपर से नीचे तक देखा। फिर गरज कर बोले 'कितना पढ़ा है' ? भला सम्पादक के सामने सम्पादक का काम मांगने की हिम्मत ! फिर इससे अच्छा उत्तर मिलता ही कहाँ से। सम्पादक जी ने गला पकड़ कर निकाल बाहर नहीं किया यही बहुत है। सतीश सम्पादक जी का व्यवहार देखकर सन्न रह गया। छोटा सा उत्तर उसके मुँह से निकला—एम. ए.।

'ओह ! तब यह स्पर्धा क्यों ! जानते हो हमारे पत्र के एक एक छन्द को बड़े बड़े विद्वान भी नहीं समझ पाते हैं, कह कर सम्पादक जी ने ऐसे मुँह को बनाया जैसे कि कम से कम उन्होंने स्वयं पन्द्रह बीस बार एम. ए. पास कर छोड़ा। सतीश

अपराधी सा बैठा रहा। फिर सम्पादक जी ने स्वयं ही पूछा 'कभी कोई किताब वगैरह तुम्हारी छपी ?

'जी नहीं' उत्तर बहुत सादा सीधा और सत्य था।

'तब फिर हमारे यहाँ के सम्पादक का क्या कह रहे हो, एक चपरासी का काम भी नहीं मिल सकता है। हमारे यहाँ के चपरासियों ने भी दर्जनों किताबें लिख डाली हैं। समझा कि नहीं ?

सतीश बेचारा घबड़ा गया। चुपचाप बाहर निकल गया। मुँह से बात नहीं निकल रही थी, चेहरे पर अन्धेरा छा गया था। बारबार मृणाल की बात याद आ रही थी। क्या होगा, कैसे चलेगा, कहाँ जायगा, कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

आखिर जाऊँ तो कहाँ जाऊँ। सचमुच ही जाता तो कहाँ जाता। धीरे धीरे घर का रास्ता लिया। सोचता रहा, सोचता रहा, इतने में उसे कुछ सूझा। उसका चेहरा प्रसन्न हो उठा। उसने कदम बढ़ाया। कहीं मन का भाव उतर न जाय इस कारण से और तेज कदम चला। जान यह पड़ता था कि किसी कृपण का धन कहीं छूट गया हो. और वह उसे लाने के लिये भागा जा रहा है।

घर में जब घुसा तो मृणाल ने उसे प्रसन्न देख कर कहा 'कुछ हुआ ?

सतीश ने कोई उत्तर नहीं दिया। फिर भी पति को प्रसन्न देख कर मृणाल अपने मन में मान ली थी कि अवश्य ही कुछ हुआ होगा; अब दुख के दिन बीत गये।

सतीश भागा हुआ अपने कमरे में गया। मृणाल समझी कि अवश्य ही कोई भारी तनख्वाह की नौकरी मिली होगी। उसी की अर्जी या वैसी कुछ लिखने के लिये इतनी उतावले हैं।

कहीं बाधा न पहुँचे, सोचकर मृणाल बहुत देर तक बाहर ही प्रतीक्षा करती रही। अवश्य बीच-बीच में झाँक कर न देखती, सो बात नहीं। जब उसने एक बार झाँकते समय देखा कि सतीश ने लिखना बन्द कर दिया है, तब कमरे के अन्दर दाखिल हुई।

मृणाल को सामने देखते ही सतीश का चेहरा फक्क हो गया। काटो तो खून न मिले। इसी समय मृणाल ने प्रश्न किया 'कुछ ..' आगे कुछ कहने से पहले ही पति का चेहरा देख कर मृणाल गिड़गिड़ा कर रह गई। सतीश ने भी सर नीचा कर लिया। दोनों कुछ देर तक चुप रहे। फिर सतीश ने एक काग़ज़ हाथ में उठा कर मृणाल की ओर हाथ फैला दिया। मृणाल ने उसे ले लिया। जब मृणाल ने उस काग़ज़ के टुकड़े पर अपनी आँखें गड़ा दी उस समय उसकी आँखों में कुछ आशा थी कुछ निराशा थी और थी खूब उत्सुकता।

अरे, यह क्या! यह तो एक कविता है! शीर्षक में लिखा था—अब क्या होगा?

मृणाल की आँखें भर आई। उसे छिपाने के लिये उसने मुँह घुमा लिया। धीरे-धीरे बाहर चली गई। एक बार भी पीछे घूम कर न देखी।

× × × ×

मृणाल के पास अपने पिता के दिये हुए दो चार सामान्य अलंकार अब भी बचे थे। उन्हें बेच बेच कर और भी दो तीन महीना चला। अब उसका भी भरोसा जाता रहा। आखिर मृणाल स्वयं ही कोशिश करने लगी। ऐसे तो वह मेट्रीक ही पास थी परन्तु इतने दिनों तक सतीश के साथ रहने के कारण किसी भी एम० ए० पास लड़की से अधिक ज्ञान

प्राप्त कर ली थी। स्वयं ही अर्जियां लिख लिख कर भेजती रही। आखिरकार एक दिन लड़कियों के कालेज से उसका बुलावा आया। वह सतीश के कमरे में झाँकी। सतीश उस समय अपने कागज़ कलम के संग बातें कर रहा था। मृणाल वापस हुई।

मृणाल घर से बाहर गई। धीरे-धीरे जाकर एक इक्के पर सवार हुई। इक्का ने लड़कियों के कालेज तक पहुँचा दिया। सीधे जाकर लड़कियों के प्रधान अध्यापिका के पास हाज़िर हुई। प्रधान अध्यापिका के साथ मृणाल की बातचीत हुई। उसका सत्तर रूपये वेतन पर अध्यापन का काम तय हुआ। वह खुशी खुशी घर वापस आई। उस समय तक सतीश कागज़ कलम के साथ अपनी बातचीत समाप्त नहीं कर पाया था। अन्य समय होता तो शायद मृणाल सतीश को ऐसे समय पर कुछ कहती नहीं, परन्तु इस समय उससे अपने आवेगों को रोका न गया।

सतीश ने अवाक होकर सुना। उसके मुँह से निकला—सत्तर!

सतीश को मालूम पड़ा कि उसे उसके कानों ने धोखा दिया। इस कारण से उसने एक बार दोहराया—सत्तर! सत्तर?

'हाँ, हाँ, सत्तर! सत्तर!...बाहरे, तुम्हें विश्वास नहीं होता,' कहकर मृणाल ने अपना मञ्जूरी-पत्र निकाल कर सतीश के सामने रख दिया।

आँखें फाड़ कर सतीश ने उसे पढ़ा। बालक जैसा आनन्द में उछल पड़ा। आग्रह के साथ मृणाल से उसने कहा 'अच्छा हुआ। अब तो मुझे आनन्द हो गया।...मगर एक बात है।

एक बात, अब तो मुझे कागज़ देने में कञ्जूसी न करोगी न' ?

सुनकर मृणाल मुस्करा दी।

मृणाल की वह मुस्कान देखते ही सतीश मौन हो गया। बैठ कर लिखना शुरू कर दिया। बिल्कुल तन्मय हो गया।

यह देख कर मृणाल बोली 'कृपाकर के आज तो कम से कम उसका पीछा छोड़ो। आज खुशी का दिन है। आओ कुछ इधर उधर की बातें की जाय'।

'रुको, रुको, तुमने मुस्कान के ज़रिए मुझे जो देने की प्रतिज्ञा की है उसका एक वर्णन लिख डालूँ। उसके बाद तो फिर बातचीत है ही' कहते कहते सतीश की कलम पूरी रफ्तार से चलने लगी।

यह सुन कर मृणाल ने अपने पागल पति की ओर देखा फिर झुक कर कहा 'आखिर यह सब करोगे क्या' सतीश की कलम रुक गई। मृणाल कहती गई 'मुझे विश्वास नहीं होता कि यह सब रद्दी की टोकरी के अलावा और कहीं...' आगे कहने की उसकी हिम्मत न पड़ी।

सतीश के हाथ से कलम छूट गई। वह मृणाल की ओर देख न सका। धीरे-धीरे उसका सर मेज़ से लग गया। मृणाल चुप। मृणाल के देखते देखते फूल मुर्झा गया।

मृणाल का हृदय रो उठा। मन में प्रश्न हुआ—यह तूने क्या कर दिया। कोई उत्तर न था। मुहूर्त्त में क्या का क्या हो गया। देखते देखते फूल जिस प्रकार से मुर्झा जाता है उस प्रकार से सतीश भी मुर्झा गया। मृणाल सिहर उठी। सतीश सिहर उठा। सारी दुनियां सिहर उठी। फूल मुर्झा गया।

× × × × ×

दूसरे दिन दुनिया की करोड़ों लड़कियों के पति जैसे मृणाल का पति, सतीश भी प्रकृतिस्थ था। केवल मृणाल सोच रही थी—हाय! मैं लुट गई! मैं लुट गई! मेरे राजा को मैंने ही लुटा दिया।

किन्तु करती ही क्या। जो होना था सो तो हो ही गया। यथा समय अपनी नौकरी बजाने के लिये निकल पड़ी। सत्तर रूपये महीने की नौकरी। न जानेपर हाथ से निकल भी तो सकती था। घर में तो लुट ही गई, अब बाहर भी लुट जाना बेवकूफी की हद है।

उधर मृणाल का निकलना था कि सतीश भी अच्छा कपड़ा पहन कर निकला। अब तो सतीश लखनऊ युनिवरसिटी का फॅस्ट्र क्लास फॅस्ट एम० ए० कॉम० था। अब क्या।

मृणाल जब शाम को नौकरी से वापस हुई तो सतीश को खूब प्रसन्न देखा। मृणाल का स्वागत करते हुए सतीश ने कहा 'आओ मृणाल। एक खुश खबरी है। कल से तुम्हें काम पर न जाना पड़ेगा। बैंक में मुझे तीन सौ रुपये वेतन की एक नौकरी मिल गई'।

मृणाल एक टक पति के मुँह की ओर देखने लगी। सतीश मुस्कराया। फिर मृणाल की ओर एक कागज़ का टुकड़ा बढ़ाते हुए कहा 'तुम्हें विश्वास न हो तो इसे देख लो।' यह है मेरा नियोग पत्र। लो...देखो... सच कहता हूँ...देखो।

किन्तु मृणाल के हाथों को जैसे कि किसी ने बाँध रक्खा था। वह आहिस्ते आहिस्ते कपड़ा बदलने चली गई। सतीश टुकुर टुकुर ताकने लगा।

दूसरे दिन से सतीश काम पर जाने लगा। हर महीने तीन सौ रुपये आने लगे। जिस टेबिल पर पहले बिखरे हुए बादामी

कागज, दो पैसे की एक कलम और हरे-बहेड़ा-आमला सड़ा कर घर में बनायी हुई स्याही से भरी मिट्टी की छोटी सी दावात रक्खी रहती थी अब उसी पर ताजा फूल का तोड़ा पीतल के फूलदान में, चाँदी से मढ़ा हुआ केलेन्डर, और भी कितनी ही शौक़ की चीजें रक्खी रहती थीं। टेबिल, आधुनिक मासिक तथा ताजा दैनिक पत्रों से भी वञ्चित न थी।

सतीश के दफ्तर जाने के बाद ही मृणाल आकर उस पर जम कर बैठती। मासिक पत्रों को उलट-पुलट कर उनमें से कहानी और कवितायें पढ़ती। कोई कहानी या कविता अच्छी लगती तो शाम को पति को सुनाती।

एक दिन की बात है। मृणाल एक साप्ताहिक पत्र देख रही थी। इतने में उसकी नजर एक कविता पर पड़ी। 'नर्मदा-संगीत" कविता का शीर्षक था। नीचे नोट में लिखा था—इस कविता को मैंने धोबी के कपड़े धोने के पत्थरों पर से संग्रह किया है। जिन्होंने इस कविता को लिखा है उनके साथ केवल एक बार कोई मेरी मुलाकात करवादें तो मैं उनका चिरकाल के लिये कृतज्ञ रहूँगा। एवं यदि यह कवि-सम्राट स्वयं आकर साहित्यिक समाज को दर्शन देंगे तो सारा साहित्य समाज अपना अहोभाग्य मानेगा।

आगे उसी नोट में लिखा था—हमारे साहित्य वीथिका में ऐसे पुष्प रहते हुए भी कौन कहता है कि हमारा साहित्य दरिद्र है। इस गुप्त पुष्प को अब जगत के सामने प्रगट करना चाहिये। जगत् उसे सरस्वती के वरदान के रूप में ग्रहण करेगा।

नीचे साहित्य सम्मेलन के सम्पादक जी का दस्तखत था। दस्तखत करने वाले वही सज्जन थे जिनके पास एक दिन

सतीश ने सम्पादक की नौकरी की मांग की थी।

मृणाल ने भी कई बार उस कविता को पढ़ा। पढ़ते पढ़ते खूब तन्मय हो गई। तन्मयता तब भंग हुई जब सतीश ने दरवाजे के पास आकर 'मृणाल' कह कर पुकारा। मृणाल दौड़ती हुई सतीश के पास गई एवं उस कविता को दिखाया। सतीश ने आद्योपान्त उस कविता को पढ़ा। नीचे का नोट पढ़ा, एक लम्बी साँस ली। फिर मुस्कराते हुए बोला 'मृणाल! मेरी रानी मृणाल! कहते कहते उसका गला भर आया। वह भर्राये गले से बोला—अब...तो वह फूल...मुर्झा गया' !!!

मृणाल की आँखों से टप् टप् मोती की सी बूदें झर गईं। दुनिया, सन् सन् घूमने लग गई। आहिस्ते आहिस्ते दोहराई—फूल मुर्झा गया! मुर्झा गया!

बच्चे के लिये।

समाज का कठिन प्रतिबन्ध रहते हुए भी जब रेणु सुधीर के साथ खुल्लमखुल्ला मिलने लगी, तब सब लोग किसी अनहोनी बात की आशङ्का करने लगे। रेणु को भलीभाँति जानने वाली सहेलियों ने भी उसके साथ इस बात की चर्चा करनी शुरू की, जिसे रेणु सुनकर लज्जित हो जाती।

परन्तु रेणु सुधीर को अच्छी तरह जानती थी। उसका दिल इस बात का साक्षी था कि सुनी हुई बातों में बिन्दुमात्र सत्य नहीं है। और इसी के बलपर उसने पीछे न हटकर सुधीर के साथ पहले जैसा व्यवहार ही कायम रक्खा। एक

दिन रेणु की मां ने रेणु को अलग ले जा कर कुछ कहना चाहा, किन्तु उनकी जबान न खुली। यद्यपि रेणु माता के मन की बात समझ कर, वहाँ से सर नीचा किये चली गई थी।

रबड़ की गेंद इतनी मुलायम होते हुए भी यदि कोई उसे किसी चीज पर दे मारता है तो वह प्रतिघात पाकर वापस आ जाती है। रेणु के विषय में भी चर्चा जितनी ही बढ़ती गई, रेणु का कोमल हृदय उतना ही सुधीर की ओर आकर्षित होने लगा। अब सुधीर को लेकर खुल्लमखुल्ला घूमना उसके लिये कोई लज्जा की बात न थी।

शहर के बड़े बूढ़े रेणु के माता पिता को बुरा भला कहने लगे। जब लुड़कते पुड़कते बात जा कर रेणु के पिता के कानों तक पहुँची, तब एक दिन अपनी स्त्री को अलग बुलाकर उन्होंने कहा—आज से रेणु सुधीर से न मिलेगी। उससे कह देना।

बाध्य हो कर रेणु की मां ने उसको पिता का हुक्म सुना दिया।

अब तक रेणु के दिल में सुधीर के लिये कितना प्रेम है उसे वह स्वयं भी नहीं समझ पायी थी, किन्तु अब जब सब लोगों ने सुधीर के साथ निकलने के लिये उसे मना किया केवल तभी इस मनाही ने मापदण्ड का काम किया। अब रेणु के दिल में हलचल मचगई। अपनी व्यथा को तो उसने कुछ दिनों तक अपने दिल में ही दबा कर रक्खा था, किन्तु इधर कुछ दिनों से उसे दबाकर रखना उसके लिये असम्भव हो गया था।

एक ओर माता पिता की मनाही दूसरी ओर शहर के

लोगों से सावधानी, ऊपर से अपने दिलकी उथलपुथल; बिल्कुल बेचैन हो उठी।

जिस सुधीर को वह एक मिनट के लिये भी अपनी आँखों से अलग नहीं करना चाहती थी, जिसे वर्षों से अपना समझ कर चलती थी, आज उसी सुधीर को सबने मिलकर उससे अलग कर दिया। मानो किसी ने उसके रोंए रोंए में आग लगा दी हो, हृदय के अन्त स्थलपर आघात किया हो। उसके सुन्दर जीवन को मिट्टी में मिला दिया हो, उसको अटूट शांन्ति अशान्ति में परिणित कर दिया, और उसके आशापथ के विचरण रोक दिया हो।

× × × ×

सुधीर ने जब इन बातों को सुना तब उसे आश्चर्य हुआ। वह रेणु को किसी अन्य से अधिक प्रेम अवश्य करता था, किन्तु उसका अर्थ वैसा नहीं था जैसा कि अन्य लोग लगाते थे। उसे रेणु को ही साथी बनाये रखने में आनन्द अवश्य प्राप्त होता था, और इसीलिए, इसी कारण से रेणु को अधिक से अधिक समय अपने पास रहने भी देता था। अभी तक कभी भी उसके मन में ऐसा कोई विचार नहीं आया था जिससे कि बात यहाँ तक पहुँच जाती।

फिर भी जब बात यहाँ तक पहुँच गई, तब सुधीर ने अपने में संशोधन किया। धीरे धीरे ऐसा हुआ कि किसी के सामने रेणु का नाम लेने में भी उसे सँकोच मालूम होने लगा! रेणु के घरकी ओर से गुजरना तो उसने बिल्कुल छोड़ ही दिया।

जो लोग सुधीर को अक्सर रेणु के साथ घूमते देखते थे, उनके दिल में सुधीर की इस पर परिवर्तन ने सन्देह का

संचार किया। बात सुधीर की माता के कानों तक जब पहुंची, तब वह बेचारी शर्म के मारे जमीन में गड़ गई, कारण उसके दिल में अपने लड़के के चरित्र पर नाज था। अक्सर अपनी समवयस्काओं को वह कहा करती थी—सुधीर का चरित्र देव चरित्र के समान है, किन्तु अब ? जहाँ कहीं सुधीर की बात अब उठती थी, वहीं से वह उसे बदल देने का प्रयत्न करती थी, या किसी काम के बहाने वहां से खिसक जाती थी। उसे देख देख कर दूसरी औरतें आपस में अपने बच्चों की सफाई देने में, चरित्र बल दिखलाने में, कोई कसर उठा न रखती थीं। बेचारी परेशान थी।

इसे समझने में सुधीर को अधिक दिन लगे। दोनों ने आपस में सलाह मशविरा किया। माता की दशा और इच्छा जानने में सुधीर को अधिक विलम्ब न हुआ। आखिर बात पक्की हो गई।

× × ×

आज सवेरे से ही सुधीर के घर में मंगलगीत शुरू हो गया है। शहर के अन्य मुहल्लों के बहुत से कुटुम्ब वाले अगले दिन ही आ गये थे। मुहल्ले वालों को बुला लाने में सवेरे से ही नाऊ लोग दौड़ धूप करने लगे थे। रह रह कर शहनाई अपनी सुर भांजती थी।

दूसरे दिन सुधीर जब ब्याह करने चला गया, तब बहुत से लोग आपस में काना फूसी करने लगे, युग कौनसा है, रोज रोज लड़के आजकल रेणु जैसी कितनी ही लड़कियों से प्रेम करते और छोड़ते रहते हैं, आदि ही उनकी समालोचनाके विषय थे। हां, कुछ लोग ऐसे भी थे जिन्होने सुधीर के विवाहको उसी दृष्टिकोणसे देखा जिस दृष्टिकोण सुधीर स्वयं तथा उनकी माताने

उसे देखा। सुधीरने जब देखा था रेणु दिन ब दिन बदनाम हुई जा रही है तब उसने सोचा कि यदि वह अपना ब्याह कर लेगा तो रेणु की बढ़ती हुई बदनामी रुक जाएगी, फिर कुछ दिनों में लोग भूल भी जाएँगे। बादको रेणु के ब्याह का समय भी आवेगा और उसकी शादी हो जायगी।

रेणु जिस समाज की लड़की थी वह समाज इतना संकुचित है कि यदि कोई किसी भी लड़की का जीवन लेकर खेल करना चाहे तो बड़ी आसानी से वह उसमें कामयाब हो सकता है। समाज को सिर्फ बतला देने की जरूरत है कि अमुक लड़की में अमुक दोष हैं। बस, फिर क्या, समाज के कुछ बहरे और अन्धे नेता बगैर समझे बूझे ही उसका फैसला दे देंगे। यदि किसी ने कभी उसके विरुद्ध आवाज बुलन्द की, कि बस, चारो ओर से उस क्रान्तिकारी आवाज को कुचलने के लिये नेतृवृन्द जुट जाएंगे। विचार को टस से मस होने देना नीति विरुद्ध होगा। मानो समाज का यही काम हो कि वह निरपराधों को पकड़कर उन्हें सजा देने में ही अपनी सफलता समझता है?

सुधीर की दवा और दुवा सफल रही। उसे और अधिक श्रम न करना पड़ा। लोग रेणु की बात कुछ दिनों में ही भूल गये। सुधीर को अपनी सफलता पर नाज था। कारण वह अपने को रेणु का शुभचिन्तक मानता था और उसी को सामने रखकर उसने यह सब किया था। ब्याह से पूर्व जब कभी उसके सामने रेणु के भविष्य का भयंकर चित्र आता तो वह व्याकुल हो उठता था। एक निरपराध लड़की, केवल इस अपराध के कारण मारी जाय, कोसी जाय, उसके जीवन को चकनाचूर करके सड़कों की धूल में पैर से रौंदा जाय, यह सुधीर के लिये असह्य था। अपराध? अपराध केवल इतना ही कि

उसने किसी दूसरे पुरुष के साथ अपने भाई का सा भी रिश्ता क्यों रक्खा ?

सुधीर ने कई बार इस मामले को सुलझाने का और भी एक तरीका सोचा था। सोचा था कि रेणु से वह स्वयं ही क्यों न शादी करले। न, न, ऐसा कैसे हो सकता था। आखिर रेणु ही प्रस्ताव से क्या सोचती। वह तो उसकी बहन सी है न। यह विचार आते ही सुधीर जमीन में गड़ जाता। जिसे एक बार अपनी बहन से भी अधिक माना हो, उसके साथ शादी करने की बात कैसे कोई सोच ही सकता था। भाई बहन के स्वर्गीय प्रेम और हार्दिक स्नेह को छोड़ प्रेमिका के बाहुपाश में अबद्ध होना उसके लिये पाप था, नरक था, कष्टदायी था।

यहाँ तक कि ब्याह के समय जब न्योता की बात उठी थी, तब माता के कहने पर भी सुधीर ने कहा था, न रेणु को न बुलाओ अम्मा !

माता लड़के की बात समझ गई थी, पास ही रेणु का घर होते हुए भी न्योता न दिया। और सब लोग आये थे, ब्याह भी हो गया था, नववधू को देखकर सुधीर भी खुश हुआ था, माता भी खुश थी, आत्मीय स्वजन पास पड़ोसी सभी को सन्तोष था। किन्तु फिर भी विवाह का दिन सुधीर के लिये निष्प्राण सा ही था।

* * *

नवगता वधू ने कुछ दिनों के अन्दर ही अपनी बूढ़ी सास को यह बता दिया कि वह उनकी योग्य 'बहू' है। सास दिन रात बहू को दिल से आशिर्वाद दिया करती थी। पड़ोस की औरतें भी वधू के कामकाजके विषय में बिना सराहे न रहतीं। अपने मिलनसार स्वभाव के कारण कुछ दिनों में ही बहू

मुहल्ले की समालोचना का विषय बन गई। यह देखकर सुधीर ने भी अपनी भाग्य देवी को धन्यवाद दिया। सुधीर की मां उठते बैठते कहा करती-मेरे बच्चे का सौ-भाग्य बहुत बड़ा है।

हुआ भी यही। इस बार पत्नी की सेवा और उचित प्रबन्ध के कारण सुधीर ने एम० ए० की परीक्षा ऑनर के साथ पास की। उसके साथ के समस्त लड़कों में प्रथम स्थान प्राप्त करने के कारण उसे विश्वविद्यालय के प्रबन्धकों ने वहीं पर लेक्चरार का पद दे दिया। वेतन भी अच्छा, रहने के लिये फ्री क्वार्टर भी मिला। अब तो बहू की प्रशंसा और भी होने लगी। सास बहू का नाम लेते फूली न समाती थीं, अच्छी तनख्वाह वालों की औरतों के अन्दर साधारणतः जो बातें पाई जाती हैं, उनकी हवा बहू को छू तक नहीं गई थीं। जिस समाज की वह लड़की थी, उसी समाज की 'पति परम गुरु' वाली कहावत को उसने जरा भी कलंकित नहीं होने दिया था। सुधीर को कभी यह अनुभव भी न हो पाया था कि औरतें भी हाड़मास की बनी होती हैं। उन्हें भी सुख दुख का ज्ञान होता है। कारण बहू को सदा वह एक सा ही पाता था।

* * *

जैसे आखों की पलक कब और कितनी बार गिरती हैं उसका लोगों को ज्ञान नहीं रहता है उसी प्रकार से समय भी कब और कैसे पल्टा खायगा इसका लोगों को भान नहीं रहता है।

समय बीतते देर न लगी। एक दिन एक ऐसा मुहूर्त्त आया जिस मुहूर्त्त में ही पाठकों ने अखबारों में बड़े बड़े हर्फों में छपा हुआ पढ़ा—"एस० के० शर्मा युनिवर्सिटी के लेक्चरार जाली सिक्का बनाने में पकड़े गये हैं;" जिन्होंने अभी कुछ दिन पहले

पढ़ा था—"मिसटर एस० के० शर्मा युनिवर्सिटी में एम० ए० ऑनर के साथ पास करके यहीं लेक्चरार के पद में नियुक्त हुए"। लोगों का आश्चर्य का ठिकाना न रहा शहर में खबर बिजली सी दौड़ गई। सभी जगह एक ही चर्चा।

विश्वविद्यालय के प्रधान अध्यक्ष महाशय ने पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब के साथ टेलीफून से बात चीत की। उत्तर पाकर वह सन्तुष्ट हुए। मामले में दखल देना अपमानजनक है। अपने अरदली को बुलाकर बोले—जाकर सुधीर की मां से कह दो कि आज ही बंगला खाली करदें। साथ ही उन्होंने सुधीर की इस महीने की बाकी तनख्वाह का एक चेक् भी दे दिया।

सुधीर की मां पर आज की घटना का बड़ा असर हुआ था। वह अभी तक मूर्छित ही पड़ी थी। अध्यक्ष महाशय के अर्दली ने सुधीर का पत्नी को ही अध्यक्ष महाशय का सन्देश सुना दिया। और हाथ में दो कागज के टुकड़े दे दिये। सुनकर बहू बेचारी हक्की बक्की रह गई। इधर पति का पकड़ा जाना, उधर सास की मूर्छा, तिसपर अध्यक्ष महाशय का फरमान; क्या करे क्या न करे कुछ न समझ सकी। एक बार सास को देखती, अन्य बार बाहर से किसी की आहट आ रही है समझ कर भागी हुई दरवाजे की ओर जाती, फिर मन में कहती न:, वह तो नहीं आये। धीरे धीरे वापस सास के पास आकर बैठ जाती। एक बार कुछ आवाज़ ऐसी हुई कि बहू के कान खड़े हो गये। हाँ, यह तो उन्हीं के गले की आवाज़ है। सीधे बाहर के दरवाजे से जाकर सटकर खड़ी हो गई। सुधीर तो था नहीं. पास पड़ोस के लोग बँगले के सामने खड़े होकर आपस में कुछ कहते जाते थे, और घूर घूर कर बंगले के दरवाजे की ओर

देखते थे। मालूम पड़ता था कि मय बंगले के बंगले के अन्दर के रहने वालों को खा जाएंगे। उसी समय शायद कालेज की छुट्टी हुई थी। सामने से जो लड़का गुजरता वह भी बंगले की ओर आँखें फाड़ फाड़ कर देखता हुआ जाता। कोई लड़का जरा जोर से कहता हुआ भी जाता—इसी बंगले में सिक्के बनते थे।

सुधीर की पत्नी से सुना नहीं गया। वह रूआँसी अन्दर चलीगई। किन्तु उसके सुनने न सुनने से दुनिया का क्या आता जाता था। शहर के लोग अखबार उलट उलट कर देखते और उसकी कड़ी समालोचना करते। समय बड़ा खराब है. अब ऐसा ही नित्य होगा, बड़े बड़े लिखे पढ़े लोग चोरी करेंगे, सेंध लगायेंगे, सिक्का बनायेंगे; कुछ लोग जो जरा सरकार के भक्त थे, उन्होंने इन्हीं बातों को जरा घुमाकर कहा—इस गान्धी ने जब से पढ़े लिखे लोगों के अन्दर से जेल का भय हटा दिया, तब से क्या न क्या देखा, भगतसिंह बी० ए० पास था, उसने पुलिस कप्तान का खून किया... गान्धी ने स्वयं नमक की चोरी की, आदि।

मौका अच्छा है, घर में कोई मर्द नहीं है, नौकर लोग काम काज छोड़कर पीछे के कमरे में बैठकर षडयन्त्र रचने लगे कि जिस समय ये लोग बंगला खाली करने के लिये अन्यत्र जाएँगे उस समय कैसे कपड़े या जेवर का बक्स तिड़ी किया जाय। चारो ओर अन्धेरा ही अन्धेरा।

× × × × ×

'घबड़ाओं नहीं। मैं अभी सब ठीक किये देती हूं' बस, यही दो बातें कहकर नवागता काम में लग गई। जैसे कितने ही दिनों की परिचिता हो ऐसे मकान के अन्दर पीछे की

ओर चली गई। प्राणहीन शरीर में थोड़ी ही देर में जैसे प्राण का संचार हुआ। नौकर लोग दौड़ धूप करने लगे। फिर नवागता जहां पर सुधीर की माता बेहोश पड़ी थीं, और वहू पंखा झल रही थी वहां आई। परमआत्मीय जैसे सुधीर की माता का सर अपनी गोद में उठा लिया। फिर वहू के हाथ से पंखा लेकर स्वयं झलने लगी, और वहू से बोली— अब आप यहां से उठिये तो, जाकर नहा धो लीजिए।

वहू मुँह बाये अपनी सास के मुंह की ओर देखने लगी। मन में सोचने लगी कि आखिर यह कौन है, इतने में नवागता बोल उठी—वैसे मुंह बाये क्या देख रही हैं...जाती क्यों नहीं ?

वहू जैसे कट गई। आजतक ऐसी कड़ी बात उसने अपने पति के मुंह से भी कभी नहीं सुनी थी। बेचारी चुपचाप उठगई। बगल वाले कमरे में दीवार से लग कर खड़ी हो गई। नवागता ने नौकर भेज कर डाक्टर को बुलवाया। जब डाक्टर आया केवल तभी वहू कमरे में आई।

डाक्टर ने एक दवादी। रोगी को हिलने डुलने को मना करके चल दिया। जब डाक्टर चला गया, तब वहू को डांटते हुए नवागता बोली 'फिर आकर यहीं खड़ी हो गई? जाकर नहाती धोती क्यों नहीं। अभी अम्मा को जब होश होगा तो वह क्या मेरा सर खायेगी'?

नवगता ने ठीक ही तो कहा, सचमुच अम्मा को होश होने के बाद वह क्या खायेंगी; सोच कर वहू जल्दी जल्दी बाहर चली गई। इतने में सुधीर की माता के सिर के पास नवागता को एक चेक् और उसके साथ एक कागज़ का टुकड़ा दिखाई पड़ा। दोनों को नवागता ने उठा लिया। चेक् को अलग कर

कागज़ में क्या लिखा था उसे पढ़ा। स्थिति समझने में देर न लगी। तुरन्त उत्तर लिखकर एक नौकर के हाथ से भेज दी। थोड़ी ही देर में नौकर उत्तर लेकर आया। सात दिन के लिये बंगले में रहने देने की आज्ञा तो प्रधान अध्यक्ष महाशय ने नहीं दी, ऊपर से लिख दिया—
कल विश्वविद्यालय खुलने से पहले ही बंगला खाली होना चाहिये, नहीं तो लड़कों पर उसका बुरा असर पड़ेगा।

इतने में बहू कमरे में आई। धीरे धीरे सास के सिरहाने के पास आकर बैठ गई। नवागत आँखें लाल करके बोली मैंने कहा नहीं था कि यहाँ पर बैठने से काम न चलेगा। जाकर खाना पकाओ'।

बहू सिर नीचा किये थूंक निगलती हुई आहिस्ते से बोली 'तैयार'।

'हूँ' कहकर नवागता अपने हाथ की घड़ी देखकर बोली हार्ट वीक है। यहाँ भीड़ करना ठीक नहीं। हां, यदि इन्हें मारना हो तो यहीं बैठी रहो।

बहू एक मिनट भी और न बैठी। धीरे से उठ कर चल दी। उसके रोएँ रोएँ जैसे रुदन कर उठे। वह सीधे जाकर अपने पलंगपर तकिये में मुँह दबा कर पड़ गई।

रात के बारह बज चुके थे। दुनिया उस समय निस्तब्ध थी केवल नवागता सुधीर की मां को अगोरे बैठी थी। और शायद सुधीर भी उस समय किसी अन्धेरी कोठरी में बैठा अपने भाग्य के विषय में सोचता रहा होगा। इतने में सुधीर की माँ एक बार जोर से कराह उठी। नवागता मुँह के ऊपर झुक कर बोली 'अम्मा'। अम्मा ने कोई उत्तर न दिया। उल्टा उनकी आंखें बन्द हो गईं, हाथ पाँव ढीले पड़ गये। नवागता

ने नाड़ीदेखी, सांस की परीक्षा की, फिर घड़ी में समय देखा। बारह बजकर चालीस। चादर उठा कर ऊपर से ढाँक दी। धीरे से उठकर वहू के कमरे में गई। वहू की उस समय आधी-रात थी शायद सपने में देख रही थी सुधीर आकर कह रहा है-डरोमत, हिम्मत रक्खो, नवागता से मत डरो, वह भला करेगो। फिर सुधीर चला जाता, फिर आता फिर जाता। मना करती नहीं सुनती। नवागता के विषय में कुछ कहना चाहतो, उसकी जवान लड़खड़ा जाती।

इतने में उसकी आँख खुलीं हड़बड़ा कर उठ वैठी। आँखें रगड़ती हुई सास के कमरे में गई। वहां कोई नहीं था। अकेली सास पड़ी थी। ऊपर से चादर ओढ़ाई हुई थी। कम्पित 'पद विक्षेप से सास के पास गई, शंकित चित्त से चादर उल्टी, द्रवित हृदय से देखा। सास की आंखें बन्द थीं। पुकारा 'अम्मा।' कोई उत्तर न मिला। फिर बोली। 'अम्मा'। अम्मा न बोली। जोर से सास को हिलाया। बहुत भारी लगा। तव क्या उस डाईन ने मेरी सासको मार डाला! हत्या की! वह यमदूती थी? सोचते सोचते फूट फूट कर रोने लगी। हाय मैं अम्मा को उसके हाथों में क्यों सौंप गई? रहते रहते नवागता की लाल आंखें याद आई। वह वहां पर वेहोश हो गई।

जव होश हुआ तव देखा कि सूर्य किरण से बंगले का कोना कोना रोशन हो गया। वह अपने पलंग पर लेटी हुई है। नवागता सरपर आहिस्ते आहिस्ते हाथ फेर रही है। और अन्य हाथ से पंखा झल रही है। उसने आंखें वन्द करली। सोचने लगी वह डाईन यहां भी आई। कुछ देर आंखें वन्द किये रही। इतने में नवागता मीठी आवाज से वोली जीजी'।

बहू के कान खड़े हो गये। क्या यह उसी डाइन की आवाज़ है ? उस डाइन के आवाज़ में इतनी मिठास कैसी ? क्या तब मैंने ही ग़लती की ? धीरे-धीरे आँखें खोली, अहिस्ते से बोली 'अम्मा' ?

नवागता बहू के सर के बाल सहला रही थी। उसका हाथ रुक गया। आप-से आप मुट्ठी बँध गई। हाथ का पंखा धप् से गिर पड़ा। आँखें चार हुईं। नवागता की आँखों से लोहू सी गरम बूंदें झरने लगीं। बहू ने नवागता को छाती से लगा लिया। दोनों फूट फूट कर रोने लगीं। जैसे दोनों एक ही भाषा में कुछ रही हों।

× × × × ×

'अब खड़ी मत रहो। जाकर नहा धो लो। अभी यहाँ से जाना है'।

कहाँ जाना है, क्यों जाना है, कैसे जाना है, इन सब बातों में एक भी बात पूछने का अधिकार जैसे बहू को है ही नहीं। नहाने के लिये कहा गया, नहाने चली गई। नहा कर जब वापस हुई तब देखा कि दरवाजे के सामने एक प्रकाण्ड मोटर खड़ी है। उसमें सब सामान लादा जा रहा है। सामने नवागता शेरनी जैसी खड़ी है। मजाल है कि कोई चीज इधर से उधर हो।

कहां जाना है क्यों जाना है इन सब बातों में एक भी बात पूछ न पाई। एक टक खड़ी खड़ी कुलियों के कोलाहल के अन्दर से समान लद रहा था, यही देखने लगी। इतने में नवागता की नज़र उस ओर पड़ी, वह बोली 'बहू' !

शायद कुलियों के सामने बिना घूंघट के देख कर नवागता टोकती होगी; बहू ने झटपट अपना घूंघट खींच दिया।

'घूंघट की जरूरत नहीं, जाकर खाना रक्खा है उसे खा लो' कहकर उधर बिना देखे ही मोटर पर ठीक से सामान लद गया या नहीं जांचने लगी। जब सब कुछ ठीक हो गया, तब सीधे रसोई में पहुंची। उस समय बहू रसोई में खड़ी खड़ी सोच रही थी कि सामने वाले ताक़ पर जो खाने का सामान रक्खा है उसे भी नवागता ने ही लाया क्या ? इतने में नवागता के पदशब्द से चौंक उठी। पीछे घूम कर देखा, और कुछ गिड़गिड़ा कर कहा। क्या बोली, नवागता कुछ भी न समझ पाई। पास आकर बहू के कन्धे पर हाथ रक्खा। आँखें चार हुई। एक दूसरे को भलीभाँति देखने लगी।

शान्ति ! शान्ति ! चुप, शान्ति भँग न करो ! रोको रोको।

आखिर तक रुका नहीं। सबेरे आँखें चार होते ही एक बार जो बाँध टूट गई थी, वही इस बार भी टूट गयी। बहू ने अपना मुँह नवागता की छाती में छिपा लिया। सुधीर के वक्ष में जो शान्ति यहाँ भी वही शान्ति, पति के वक्ष में जो चाह यहाँ भी वही चाह, किन्तु...किन्तु यह मुलायम होते हुए भी है अचल अटल और दृढ़। यहाँ की धुकधुकाहट में एक स्थिरता है जिस स्थिरता को सुधीर नहीं पा सकता है, नहीं पा सकता है। यहाँ की सी स्थिति को प्राप्त करने के लिये तपस्या की जरूरत है। यहाँ की चाह किसी अन्य की चाह से कितनी अधिक है, वह तो अनुभव करने की ही वस्तु है। शायद कवि या चित्रकार भी चित्रित करने का दुःसाहस न करेगा तो बेचारी सीधी सादी बहू उसे कैसे प्रकाशित करती। अपनी असहाय अवस्था को याद कर कर आँखों के बिन्दुओं से नवागता को उसका अनुभव कराने की व्यर्थ चेष्टा जारी रक्खी।

इतने में बाहर से नौकर ने कहा—बीबीजी सब ठीक है।

नवागता हिली। अपनी आँखों को पोंछते हुए भारी आवाज़ से बोली 'हाँ'।

बहू अलग हो गई। सचमुच समय बहुत हो गया था। अभी नये स्थान पर जाना था, सामान ठीक करवाना था। आज के रैन बसेरे के लिये स्थान और कहीं था।

× × × × ×

साधारणत: नये साथी के साथ नई जगह पर बासा बाँधने में किसी के मन में जो संकोच होता है उस प्रकार का कोई संकोच बहू के मन में नहीं हुआ। नवागता का व्यवहार शुरू में कुछ खला अवश्य था किन्तु जब से आँखें चार हुई तब से एक दूसरे को इस प्रकार समझ लिया, कि आपस का विरोध कहाँ चला गया, उसका दोनों में से एक को भी पता न था। दोनों ने एकदूसरे को समर्पित कर दिया था।

नवागता के व्यवहार से यह मालूम होता था कि मानो वह सुधीर के घरबार रीत रिवाज़ से बहुत दिनों से परिचित है। यहाँ तक कि सुधीर के स्वभाव से वह अपरिचित है, ऐसे विचार के लिये बहू के मन में शंका करने की जरा भी गुन्जाइश बाकी न रही।

सुधीर का केस पंजाब के किसी जगह का था। उसे पकड़ने के बाद वहीं ले जाया गया था। पन्द्रह दिन तक किसी को यह पता भी न चला कि सुधीर कहाँ है। उसके बाद मजिस्ट्रेट के ज़रिये घूम फिर कर एक पत्र बहू के पास आया। बहू सुधीर के हाथ की लिखावट पहचानती थी किन्तु उसे पढ़ना उसके वश के बाहर की बात थी। केवल हस्त लिपि देखकर ही उसका हृदय उछल पड़ा। पढ़ावे किससे? उस समय

नवागता भी नहीं थी। वहू वार बार ऊपर के कोठे से सड़क की ओर देखती। यद्यपि नित्य का आने का समय नवागता का नहीं हुआ था फिर भी वहू को यही लग रहा था कि अन्य दिन से आज नवागता आने में देर कर रही है। असहाय सी बहू वार बार पत्र को लिफाफे से निकालती फिर बन्द करती, हृदय से लगाती, कुछ सोच कर अश्रु-वर्पण करती दीर्घ साँस लेती। उसने पत्र की पंक्तियों को तो कम से कम पचास वार गिन डाला।

नवागता ने आकर सुधीर के पत्र को ऊपर से देखकर ही पहचान लिया। पढ़कर वहू को सुनाने लगी—

वोसूलजेल, लाहौर
३० जुलाई १९४५

पूजनीया माताजी—

अम्मा। मुझे क्यों पकड़ा गया और कहां का अपराध है इसका पता अब मुझे चला, आशा है मुकद्मा चलने पर निर्दोष छूट जाऊँगा। मैं यहाँ पर कल लाया गया। अभी तक पुलिस वाले जांच पड़ताल कर रहे थे इसी से पत्र न लिख सका। शायद पुलिस को भी इसका इतमीनान हो गया होगा कि मैं अपराधी नही हूं। किन्तु फिर भी किसी विशेप कारण से अभी तक नहीं छोड़ा गया। आप लोग परेशान न हों। मेरा जो कुछ होना था सो तो हो ही गया। लोगों के मन में क्या होगा वह मैं नहीं कह सकता मगर मेरे दिल से मैं निरपराध हूँ। इस लिये मुझे भी विश्वास है कि लोग मेरे साथ पहले जैसा ही व्यवहार रक्खेंगे। बाकी सब बातें आगे के पत्रों में। मेरा हार्दिक प्रणाम !

आपका सुधीर

पत्र को पढ़ बहू की ओर ताक कर नवागता ने कहा—अभी साहब को यहां की कोई खबर नहीं है...खैर अभी पत्र लिख देती हूँ। कहकर स्कूली कपड़ों को बिना बदले ही पत्र लिखने बैठी। बहू से कुछ पूछे बिना ही लिख डाला—

आर्यनगर, लखनऊ
१५ अगस्त १९४५.

सादर वन्दे—

आपके जाने के दिन ही रात को माता जी का हार्टफेल होकर मृत्यु हो गई। आपके छात्रों ने उनका उचित सत्कार किया। प्रधान अध्यक्ष महाशय ने दूसरे ही दिन बँगला खाली करवा लिया था। आपकी बाकी तन्ख्वाह मिल गई। अब मैं जहाँ रह रही हूँ उस पते से पत्र दीजियेगा। किसी बात की चिन्ता न करियेगा। आपके न रहने से मुझे मानसिक अशान्ति अवश्य है, और किसी कारण से तकलीफ नहीं है। सब की सहानुभूति है। खूब सुरक्षित हूँ। पिताजी को पत्र लिखा था किन्तु वे बेचारे रुपया न होने के कारण यहां तक नहीं आ सके। सुना है कि उनका बाजार में इतना ऋण हो गया है कि वे यहां आने तक का खर्चा जुटा नहीं सके। अब कोई एक पैसा भी देने की हिम्मत नहीं करता। आपके चले जाने के कारण उन्हें इस महीने में एक पैसा भी न भेज पायी। खैर घबड़ाने का कोई कारण नहीं है। विपद ही लोगों की ठीक परीक्षा का समय है। कुशल संवाद से वञ्चित न करियेगा।

मैं हूं आपकी शान्ति ! नमस्ते।

लिखकर बहू को पत्र पढ़कर सुना दिया। फिर स्वयं जाकर पत्र छोड़ आई। जब पत्र छोड़ कर वापस हुई तो सामने का

दृश्य देख कर रुक गई। दृश्य बहू के पत्र पढ़ने का था। बहू तन्मय होकर अपने पति के पत्र को पढ़ रही थी। केवल पढ़ ही नहीं बल्कि, असली पढ़ना तो वही पढ़ रही थी। ऊपर से नीचे तक के एक एक वर्ण घोट रही थी। जान यह पड़ता था कि प्रत्येक लकीर के एक एक वर्ण उसकी आँखों में समा रहे हैं। एक एक वर्ण के अन्दर अतीत की स्मृति से लेकर आजतक की समस्त घटनायें सम्मिलित थीं। हरएक वर्ण ही मानों एक एक घटना की प्रतिच्छाया हो, सुधीर की प्रतिच्छाया हो।

× × × × ×

आर्यनगर! हां, यही मुहल्ले का नाम है। हस्तलिपि; हाँ, यही उसकी हस्तलिपि है। मगर वह कहां से आ गई; क्यों आ गई; उससे अब मेरा क्या सम्बन्ध है? क्यों फिर आ गई?

किसी ने उत्तर नहीं दिया। तेज कदम टहलने लगा। अतीत की कितनी ही बातों ने सुधीर के हृदय में उथल पुथल मचा दी और कुछ देर तक कोठरी के इस कोने से उस कोने तक पायचारी की। जब कोई मीमांसा न कर पाया तब अपने कम्बल पर बैठ गया। एक, दो, तीन, कईबार पत्र को पढ़ डाला

पत्र पढ़ाने वाला कैदी राइटर सुधीर को पत्र देकर किसी अन्य कैदी से बात कर रहा था। जब उसकी बातें खतम हुई तब वह सुधीर के कमरे के सामने आकर बोला। 'क्यों बे पढ़ लीं'?

सुधीर को मालूम न था कि जेल में खानगी पत्र भी वापस ले लिये जाते हैं। जब सुना कि पत्र वापस देना पड़ेगा तब उसने एकबार और पत्र को पढ़ने के लिये लिफाफे से

निकाला। कैदी राइटर ने झपट कर सुधीर के हाथ से पत्र को छीन लिया और डांटते हुए कहा—कहते हैं कि साला एम. ए. पास है। मगर अक्ल एक दमड़ी की भी नहीं है। जैसे पागल हो गया है।' कहकर अपने झोले में सुधीर के पत्र को भरने लगा। जब तक पत्र का एक कोना भी दिखाई पड़ता था तबतक सुधीर एकटक पत्र की ओर देखता रहा। यह देखकर राइटर ने अपनी बड़ी बड़ी मूछों की ओट में मुस्कराहट की लकीर सी खींचते हुए कहा—अबे जेल है जेल। यहां सब भूल जा। यहां पर इश्कबाजी नहीं चलती' कहते कहते राइटर आगे बढ़ा। सुधीर को लगा जैसे कि उसकी एक मात्र सान्त्वना की वस्तु को किसी ने उससे जबरदस्ती छीन ली हो किन्तु इससे जेल अधिकारियों को क्या। उन्हें तो कानून को अमल में लाना है। माता की गोद से इकलौते बेटे को छीनकर यमदूत जिस प्रकार से बिना किसी दुविधा के ले जाते हैं उसी प्रकार राइटर ने भी दफ्तर का रास्ता पकड़ा। राइटर के दिल में दया आवे; सिर्फ एकबार फिर से एकबार पत्र दिखा जाय। किन्तु नहीं। जहां तक सुधीर की नजर गई राइटर को देखता रहा किन्तु यमदूत ने एकबार भी मुड़ कर न देखा। गया तो गया ही। शामतक, रातभर, सवेरे, दूसरे दिन उसी समय तक रास्ता देखता ही रहा, किन्तु सब वृथा, बेकार था।.........जब कुछ होश आया—माता की मृत्यु हो गई, शान्ति अच्छी तरह है, लखनऊ में ही है, मुहल्ला आर्य नगर है; माता की मृत्यू का कारण मेरी गिरफ्तारी। ....तेजी से अपनी कोठरी में सुधीर टहलने लगा।

कल से और कोई नहीं आया। शामको जेलर साहब छड़ी घुमाते घुमाते आये टूटी फूटी अँग्रेजी में बोले—तुम्हारी

मा मरी है ? अच्छी बात है। जो चाहो तो तुम्हें अभी एक वार नहाने का हुक्म दे सकते हैं।' फिर थोड़ा रुक कर बोले' नहाना चाहते हो ?...मुझे आज ही पता चला। नहीं तो जो कल पता चला होता तो कल ही तुम्हें नहाने देते।

सुधीर क्या उत्तर देगा कुछ स्थिर नहीं कर पा रहा था। माता की मृत्यु हुए करीब एक महीना हो गया था, खबर मिली कल, और आज अभी जेलर साहब केवल एकवार नहाने की आज्ञा देकर सहानुभूति दिखाना चाहते हैं। वह चुप रहा।

जब जेलर ने सुधीर को कुछ न कहते देखा तब वह अपनी छड़ी घुमाते घुमाते आगे बढ़ा। पीछे का सिपाही सुधीर को इशारा करते हुए बोला बैठ जा वे !

सुधीर अपने कम्बल के पास बैठ गया। देखते देखते जेलर साहब नजर से ओझल हो गये। शायद दो कदम आगे बढ़ कर ही वह भूल गये थे। रोज ऐसे कितने ही कैदियों के माँ बाप मरा करते हैं जेलर का उससे क्या आता जाता है।

बाल्यकाल से माता को छोड़कर सुधीर और किसी को जानता भी न था। पिता की मृत्यु किस युग में हुई इसका उसे जरा भी ध्यान न था। माता के मुँह से सुना था कि उसका जन्म किसी सरकारी बंगले में हुआ था। पिता किसी इन्टर कालेज के प्रिन्सिपल थे। मरते समय प्रेविडेन्ट फन्ड के रुपये पिता छोड़ गये थे। उसीसे आजतक माता ने सुधीर को पढ़ाया लिखाया, आदमी बनाया। माता के अपने हाथ से बनाये हुये बच्चे की आजकी हालत यदि माता आकर देखती तो शायद वह ज़ोरों से चीख पड़ती; जिसकी आवाज़ से शायद वह दानवरूपी गगन चुम्बी चहार-दीवारी जमीन

पर आ गिरती और कहती—फट पड़ो! मुझे जमीन-दोज होने दो!

× × × ×

दो तीन महीने के अन्दर ही नवागता को पता चल गया कि वहू गर्भवती है। एक नौकर रखना जरूरी था, किन्तु करती क्या, सिवाय मासिक चालीस रुपये के और कोई आमदनी न थी। और उसका भी क्या ठिकाना। किसी दिन भी नोकरी जा सकती थी। वह तो केवल एक अध्यापिका के स्थान पर नियत हुई थी। कभी भी अध्यापिका छुट्टी पा सकती है एवं उसको नौकरी छोड़नी पड़े। जहाँ तक उसके पिता माता से सम्बन्ध है, वे तो उसे एक प्रकार से छोड़ ही चुके थे। अनेक कोशिश करने पर भी जब वे अपनी लड़की को घर में वापस नहीं बुला सके तब उन्होंने उसको त्याग दिया था।

वहू बेचारी उसी गर्भवती अवस्था में घर के समस्त काम-काज करती रही। छुट्टी के दिनों में नवागता भी हाथ बटाती। इसी प्रकार से दिन बीतते।

दिन जाते देर नहीं लगता। देखते देखते समय आ गया। एक दिन प्रसव-वेदना से बहू बेचैन हो उठी। लोगोंने सलाह दी कि सामियाना अस्पताल में वहू को ले जाना चाहिये, नवागता ने वैसा ही किया। नाना प्रकार के मोलभाव के बाद अस्पताल वालों ने दाखिल किया। बच्चे का प्रसव चीरफाड़ कर कराया गया। बच्चे को देख कर सब लोग खुश हुए। अँग्रेज तथा अध-गोरी नर्सोंने कहा—यह लड़का तुम लोगों के घर में रखने लायक नहीं है। इसे तो किसी साहब के हाथ में सौंप दो।

बहू के लिये इससे बढ़कर और खुशी की बात क्या हो सकती थी। उसने होश आते ही बच्चे को छाती से चिपका लिया। एक दिन एक डाक्टरनी ने बच्चे के बाप के विषय में बातचीत की। फिर हँसी हंसी में बहू से बोली—इसका बाप कोई अँग्रेज होना चाहिये। पास ही नवागता बैठी थी, वह झट उत्तर दी—इसका बाप अँग्रेज तो नहीं मगर है पक्का साहब। फिर डाक्टरनी ने बच्चे के बाप के विषय में और भी बहुत कुछ सुना। बादको बच्चे को एक बार प्यार करके चली गई। बहू ने बच्चे को छाती से चिपका लिया सुधीर को भी पत्र द्वारा सूचित किया गया।

धीरे धीरे बहू की तबियत अच्छी होने लगी। डिस्चार्ज का दिन आया। अस्पतालवाले बिल बनाकर नवागता के हाथ में दिये। बिल देखते ही नवागता की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। कुछ देर चुपचाप खड़ी रही। फिर धीरे धीरे बाहर निकल गई। सीधे स्कूल की अध्यक्षा के पास पहुँची। अध्यक्षा का चेहरा नवागता को देखते ही तमतमा उठा। नवागता आँखें नीची किये कुछ देर खड़ी रही। इतने में अध्यक्षा बोल उठी—क्या, फिर कोई जाल रचकर आना हुआ?

नवागता सब बातें कह सुनाई। अध्यक्षा कुछ नरम अवश्य पड़ी किन्तु अपनी असमर्थता जाहिर करती हुई बोली—क्या बताऊँ। ऐसे ही कतृपक्ष आप पर नाराज हैं। आप बिना नोटिस दिये एकदम नागा करने लगी। कई दिनों तक मुझे आपके स्थान पर जाकर पढ़ाना पड़ा। यह तो कहिये कि एक अध्यापिका मिल गई नहीं तो पता नहीं और क्या होता। सब ठीक है। बच्चा भी अचानक एकदिन बिना नोटिस दिये पैदा हुआ। इसीसे मैं आप लोगों को खबर न दे सकी।

किन्तु अब बच्चा तथा उसकी माँ ठीक हो गयी। अब मैं बराबर आऊँगी। कृपया इस समय मुझे केवल दो महीने की तन्ख्वाह दिला दीजिये।

—यदि मेरे वश की बात होती तो मैं अवश्य करती... किन्तु...कहकर अध्यक्षा चुप हो गई। नवागता जमीन की ओर ताकती हुई बैठी रही। अध्यक्षा भी टेबिल पर रक्खा हुआ पेपरवेट् को ऐसे ही इधर उधर करने लगी।

बैठना वृथा है, सोच कर नवागता उठी। धीरे धीरे दरवाजे की ओर बढ़ी। जब बिलकुल दरवाजे से बाहर हो गई तब अध्यक्षा ने पीछे से पुकारा—सुनिये।

नवागता वापस हुई। पास वाली कुर्सी को दिखाती हुई अध्यक्षा बोली—बैठिये। नवागता बैठ गई। तब अध्यक्षा बोली—देखिये कुछ ख्याल न करियेगा मैं मजबूर हूँ। आप तो जानती ही हैं कि मैं बेवा हूँ और चार पांच बच्चों का सारा भार मेरे ही ऊपर है...नहीं तो...आगे कुछ कहने से पहले ही अध्यक्षा का गला भर आया। वह कुछ कह न सकी। नवागता की भी आँखें भर आईं।

दोनों कुछ देर वैसे ही बैठी रहीं। फिर नवागता आहिस्ते आहिस्ते उठ खड़ी हुई और उसी प्रकार से आहिस्ते आहिस्ते बाहर निकल गई। अध्यक्षा एकटक नवागता को तबतक देखती रही जबतक नवागत दृष्टि से बाहर न हो गई।

वहाँ से निकलकर जाय कहाँ कुछ निश्चय न कर पाई, यद्यपि उसके पाँव आप से आप अपने घर की ओर ले चले। पिता अपने बंगले के सामने आराम कुर्सी बिछाकर उसपर पांव फैला के अखबार पढ़ रहे थे। पुत्री को देखते ही वह बोले—कौन ?

पुत्री चकपका कर खड़ी हो गई।

गौर से पुत्री की ओर देखते हुए पिता बोले—'oh, you! तुम हो! अभी तक कुछ बाकी है क्या? आगे कुछ और....

पुत्री दृढ़ स्वर में बोली—हाँ, मैं हो हूँ डेडी! एक दुस्थ परिवार की मदद के लिये आप से कुछ सहायता चाहती हूँ।

Help! My God! मुझसे मदद...I say, getout! Don't turn your face...जाओ! निकल जाओ मैं तुम्हारा मुँह नहीं देखना नहीं चाहता।

पुत्री पीछे न हटी। और दृढ़ स्वर से बोली—इकलौती पोती उसके दादा के बैंक एकाउन्ट से केवल सौ रुपये चाहती है। बाप-माँ की नहीं...

—मुझे कानून बताने आई है? I say, getout नहीं तो अभी चपरासी के हाथ से गला पकड़वा कर निकलवा दूँगा।

कहते कहते पिता आराम कुर्सी से उठकर खड़े हुए। क्रोध से उनका शरीर कांपने लगा। फिर चिल्ला कर बोले—Go कचहरी में नालिश करो। एक पाई भी नहीं मिलेगा। Nascy वेश्या! आई है रुपया लेने?

पुत्री सिहर उठी। पीछे हटी। एक बार भी सर ऊँचा करके न देखी। धीरे धीरे बंगले से बाहर निकल गई। पिता पीछे से पुत्री को देखते रहे। जब आँखों से ओझल हो गई तब ज़मीन पर पैर पटकते हुए पिता बोले—वेश्यावृत्ति! Nasty business.

पुत्री सीधे अस्पताल पहुँची।

थकी-मांदी नवागता को देख कर बहू बोली—बाप् रे

बाप्! कबके निकली हो, अभी तक कहाँ रही? चेहरा भी बिल्कुल सूख गया।

'हूँ' कहकर नवागता वहू के बिस्तर पर बैठ गई। पास ही बच्चा पड़ा था। नवागता के बैठने पर खाट हिल गया। बच्चा जग गया। तुरन्त गुरमुरा कर रोने की तैयारी करने लगा। देखते ही, नवागता ने बच्चे को गोद में उठा लिया। उठा कर हाथ से एक बार झोंका देते ही बच्चा बिना दांत के मुँह से मुस्करा दिया। नवागता ने बच्चे का मुँह चूम लिया। बस् नवागता का मन हल्का हो गया। आज की समस्त बातें भूल गई। बच्चे के साथ खेलने लगी।

खेलते खेलते बच्चा सो गया। धीरे से उसे लेटा दी। जब बच्चे से फ़ुर्सत मिली तब फिर वही रुपये की चिन्ता। धीरे-धीरे नवागता उठ कर खड़ी हुई। बहू के कुछ पूछने से पहले ही नवागता बाहर चली गई। सीधे एक कबाड़ी के यहाँ पहुंची। थूंक निगलती हुई बोली—तुम कबाड़ी हो, पुराना माल खरीदते हो?

हाँ हुजूर! यही मेरा काम है। उसी में से दो पैसा पाता हूं उसीसे अपने बाल बच्चों का खर्च चलाता हूँ।...हुक्म?

मेरे साथ चल सकते हो?...बहुत माल है...केवल सौ रुपये चाहिये।

कबाड़ी तुरन्त तैयार हो गया। अन्दर जाकर अपने कमरे में नोटों की गड्डी बाँध ली। नवागता के पीछे हो लिया। नवागता अपने बासा में पहुँची। कबाड़ी ने घूम घूम कर सब चीजों को देखा। फिर नवागता से बोला—मगर हुजूर!... हम लोग विना लिखा-पढ़ी किये कुछ लेते नहीं। आपकी बात अलग है...नहीं तो आगे चल कर कुछ गड़बड़ी हो...हाँ

हुजूर...फिर हाथ में हथकड़ी...हाँ हुजूर...

डरो मत। इन सब चीजों का मैं मालिक हूं।...मैं लिख दूँगी।

बस, बस, यही मैं कह रहा था। सिर्फ एक कागज़ के टुकड़े में लिख दीजिये बस, उसी से काम चलेगा।...और कागज़ भी मेरे पास है।...लाऊँ क्या?

जो कुछ लाना, करना हो जल्दी करो। मेरे पास समय नहीं है। शाम हो रही।

कबाड़ी दो छलांग में बाहर निकला। फिर दरवाजे के पास से कुछ याद करके वापस हुआ। उसे देखते ही नवागता बोली—अभी तक नहीं गये?

एक बात याद आई। हुजूर गरीब परवर हैं।...कह रहा था कि मर्द के लिए ज़बान देनी बहुत बड़ी बात है।...कह रहा था कि आपने मुझसे वादा किया।...नहीं तो कबाड़ी साले बड़े बदमाश होते हैं। सूंघते फिरते...कोई ताज्जुब नहीं कि मेरे निकलते ही यहाँ आ पहुंचे। हुजूर को बहकावें...

नहीं, नहीं मैं बहकने वाली नहीं हूं। तुम जल्दी करो।

बस बस, ज़बान बहुत बड़ी चीज है, युधिष्ठिर ने राज्ञ खोया, दशरथ ने बेटे को वनवास दिया।

कहते कहते कबाड़ी गिरते पड़ते बाहर निकल गया। थोड़ी ही देर में अपने लड़के के साथ मय कागज़-पत्र, कुली मजदूर के पहुँचा।

नवागता आराम कुर्सी पर बैठे आराम कर रही थी। बाप बेटे, दोनों नवागता के सामने पहुँचे। दोनों ने झुक झुक कर सलाम किया। कबाड़ी बोला—हुजूर को तकलीफ न हो। इसीसे लड़के को साथ में लाया। इसबार उसने मिडिल पास

किया है। तीनों ज़बान में खूब लिख लेता है...आपको सिर्फ़ दस्तखत करना है।...हाँ, तो किस ज़बान में लिखने पर आपको सुभीता होगी ?

सब में, सब में। चाहे जिसमें लिखो। जल्दी इस नाटक को खत्म करो।

कबाड़ी अपने पुत्र की ओर देख कर बोला—हां बेटा, लिखो।

कबाड़ी का लड़का नवागता की ओर देख कर बोला— तो हिन्दी में लिख...

आगे कहने की ज़रूरत न हुई। बीच में ही नवागता बोली—ठीक है।

जब कबाड़ी का लड़का लिखकर पिता को सुना दिया तब पिता ने उस कागज को नवागता के हाथ में दिया। नवागता हाथ में ले कर हो बोली—यह क्या, यह तो कचहरी का स्टेम्प है न ?

जी हुजूर ! इसी में पक्का काम होता है। नहीं तो आगे चल कर...हाँ ...

ठीक है। कहकर नवागता बिना पढ़े ही नीचे दस्तखत कर दी।

कबाड़ी ने अपने हाथ में कागज को ले लिया। फिर अपने लड़के के हाथ में कागज को देकर रुपया निकालते हुए अपने लड़के से बोला—एकबार और देख लो। सब ठीक है न ?

जब लड़के ने हूँकारी भरी, तब खरखराते हुए दस दस के दस नोट निकाल कर नवागता के हाथ में दिया और बोला—देख लीजिये हुजूर। नोट खरे हैं।...हम लोग बेईमान नहीं हैं। ईमानदारी के पैसों से ही हमारा सब कुछ है। आपकी

दुवा से मेरे दस दस मकान खड़े हैं। सब ईमानदारी की कमाई है।

फिर अपने लड़के की ओर फिर कर बोला—जरा बाहर से उन लोगों को बुला लो। अब देर करने में कोई फायदा नहीं। गवाहों में भी दस्तखत हो जाय और माल भी उठा लें। हुजूर को भी काम होगा।

लड़का चला गया। तब कबाड़ी ने नवागता से कहना शुरू किया—यह वखत है। नहीं तो भला कोई अपनी शौक की चीजों को बेचता ही क्यों।...खैर, आप लोगों की बात ही अलग है। जब चाहें आप फिर यह सब बना सकती हैं।

इतने में कबाड़ी का लड़का मजदूरों को ले कर पहुँचा। कबाड़ी ने नन्दु और झम्मन का नाम लेते हुए कहा—जरा इधर आना तो। तुम लोग अपना नाम लिख लेते हो; इसपर जरा अपना नाम लिख तो दो!

नन्दु और झम्मन आगे बढ़ आये। कबाड़ी ने अपने लड़के से कहा—जरा दिखा देना तो बेटा, कहाँ पर इन लोगों के दस्तखत होंगे।

लड़के ने दिखा दिया। नन्दु और झम्मन के दस्तखत हो गये। कबाड़ी माल सम्हालने लगा। मजदूर लोग एक एक करके चीजों को बाहर ले जाने लगे। नवागता वैसे ही आँख मूँदे आराम कुर्सीपर बैठी रही। जब सब चीजें एक एक करके बाहर चली गई तब कबाड़ी ने नवागता के सामने आकर सलाम किया। फिर बोला—'हुजूर की मेहरबानी सब चीजें चली गई...सिर्फ आप...आप...अभी बैठियेगा क्या?

नवागता झल्लाकर बोली—मैं बैठूंगी नहीं तो क्या उसी सौ रुपये में मैंने अपने को भी बेच दिया?

जीभ को दाँत से काटते हुए कवाड़ी बोला—अरे राम! राम! आपको खरीदने की हिम्मत किस में है।...मैं तो कह रहा था उस आराम कुर्सी की बात।

कवाड़ी के मुँह से बात निकलनी थी कि झट नवागता खड़ी हो गई। कवाड़ी आराम कुर्सी को मोड़ता जाता था और कहता जाता था। भला आपको कौन खरीद सकता है। आप ने एक बार जवान दे दी बस टस सें मस नहीं हुई। एक ही बात में सब तैं हो गया...इसी को तो शास्त्र में बखाना है। राजाहरिश्चन्द्र ने सब कुछ एक जुबान पर हारा था...मगर अब आप जाएंगी कहाँ?

कुर्सी को मोड़ कर बगल में दबा कर चलने की तैयारी करते हुए कवाड़ी ने पूछा। नवागता का चेहरा तमतमा उठा। वह बोली—जहन्नुममे.।

कवाड़ी में आगे पूछने की हिम्मत न थी! जमीन तक सर झुकाकर एक बार सलाम करके धीरे धीरे बाहर निकल गया। बाहर दोनों ठेले तैयार थे। वे केवल कवाड़ी का रास्ता देख रहे थे। कवाड़ी को आते ही ठेले रवाना हो गये। पीछे पीछे कवाड़ी और उसका लड़का-धीरेसे सम्हल के, देखना। आदि, आवाज लगाते हुए चले। देखते देखते ठेले दूर चले गये।

जब कवाड़ी आदि चले गये तब बगल के मकान की बहू आई। सामने नवागता को चुपचाप खड़ी देखकर बोली—कैसी पागल हो बहन। ऐसे कहीं घर का घर कवाड़ियों के हाथ बेचा जाता है?...वह कह रहे थे कि यदि कहीं जाना ही था तो कमसे कम लोटा थाली तो रख लेतीं।...फिर हजार रुपये में कहीं इतना सामान दिया जाता है?...वह कह रहे थे कि सरकारी नीलाम पर भी डेढ़ हजार मिलते।

अबकी नवागता के कान खड़े हुए। थूँक निगलती हुई वह बोली—मैंने बेचा है यह आप को कैसे पता चला ?

क्यों, तुम से लिखवाने के बाद उनके पास कत्राड़ी का लड़का कागज दिखाने गया था। सिर्फ हजार रुपये देखते ही वह बोले, बड़ी गलती की।

हजार रुपये ? उसमें हजार लिखे थे ?

क्यों, तुम्हें नहीं 'मिले क्या ?...अभी भी समय है। वह तो वकील भी हैं। न हो तो एकबार उनके पास चलो। अभी अभी फैसला हो जायगा।

नवागता ने आँखें बन्द कर ली। फिर ऊपर की ओर देखकर कुछ सोचती हुई बोली—नहीं...नहीं मुझे फैसला नहीं करवाना है...

कहते कहते नवागता के गाल पर दो बूँद आँसू झर पड़े। वह अपने मन से ही बोलने लगी—देख लिया ! देख लिया। सब कुछ देख लिया ! ..समझ लिया कि दुनियाँ में सब धोखेबाज हैं, बेईमान हैं, आदमी नहीं हैं हैवान हैं।

कहते कहते जमीन पर बैठ गई। पड़ोसिन भी बगल में बैठकर सन्त्वना देने के लिये कुछ कहने ही जा रही थी कि इतने में बाहर से किसी ने कहा—कोई है ?

दोनों के कान खड़े हो गये। इतने में बाहर से फिर आवाज आई। नवागता उठकर दरवाजे के पास गई। अस्पताल का चपरासी एक चिट्ठी लेकर आया था। नवागता के हाथ में चिट्ठी देते हुए बोला—आखिर आप मिल ही गई। नहीं तो बड़ी डाक्टरनी सोच रही थी कि आप घर पर मिलियेगा नहीं।

नवागता ने कोई उत्तर न दिया। पत्र ले कर पढ़ने लगी। पढ़ते ही उसके ओंठ सूख गये। शायद धुंधली उजियाले में

कुछ का कुछ पढ़ ली होगी सोचकर सामनेवाली पान की दूकान में जो तेज बिजली की बत्ती जल रही थी उसके पास गई। ठीक ही पढ़ी थी, बहू के पेट के घाव का सीवन अब भी कमजोर था। नवागता के चले आने के कुछ देर बाद लड़का रो उठा। उस समय बहू की आँखें जरा सी लग गई थीं। बच्चा रोते रोते नीचे लुड़क पड़ा। बहू तन्द्रा भरी आँखों से बच्चे को उठाने गई। खुद भी पेट के बल गिर पड़ी। घाव का सीवन टूट गया। नर्स लोगों की लाख कोशिश करने पर भी अभागिन बहू चिरकाल के लिये चल बसी। किन्तु बच्चे को कुछ भी न हुआ वह स्वस्थ है।

नवागता एक मुहूर्त के लिये भी अपेक्षा न करके सामने से एक टाँगा जा रहा था उस पर बैठ गई। उसका सारा शरीर थर थर काँप रहा था। सीधे अस्पताल पहुँची। टाँगे को विदा करके वहू जिस वार्ड में रहती थी वहाँ पहुँची। वार्ड की नर्स मुर्दा घर को ओर उँगली करती हुई बोली—तुम्हारी जोजी वहाँ है। जल्दी उठवा लो......और बच्चे को अस्पताल के अधिकारी अपने जिम्मे लिये हैं।...बिल का पेमेन्ट होने पर मिलेगा। देखना हो तो जाकर देख आओ। खास वार्ड की नर्स के जिम्मे है।

नवागता तैयार थी। झट बेग खोलकर एक मुट्ठी नोटों को नर्स की ओर फेंक दी। नर्स ने उन्हें उठाली। नवागता भागी हुई मुर्दा-घर को ओर गई। दरवाजे में ताला पड़ा था। काँच लगे जङ्गले से देखा। टेबिल पर सफेद चादर से लपेटी हुई लाश पड़ी थी। जङ्गले से सटकर बहुत देर तक खड़ी रही। इतने में उस घर का रखवार मेहतर ने आवाज लगाया—कौन है रे!

नवागता वहाँ से हटी। मेहतर दूर से ही बोला—चुड़ैल

ससुरी सन्झई से मुर्दा खाने आवती।...ठहर ससरी ! बिना टांग तूरे रहिवे न।

नवागता रुक गई। गला खंखारते हुए बोली—किसको कह रहे हो ?

तोही को ससरी ! जानत नाहीं कि अब ही हम जागत हई।

कह कर एक भद्दी सी गाली दी। नवागता एक बात भी आगे सुनने को तैयार न थी। वह तेज कदम बड़ी डाक्टरनी के दफ्तर की ओर बढ़ गई। बड़ी डाक्टरनी का दफ्तर उस समय बन्द था। बगल में रातवाली डाक्टरनी का दफ्तर खुला था। उसमें घुस गई। डाक्टरनी बैठी थी। पास ही वह नर्स खड़ी थी जिसके आगे नवागता ने नोटों को फेंका था। दोनों, ने सादर अभ्यर्थना करके नवागता को बैठाया। फिर डाक्टरनी बोली—तुम्हारे रुपये जमा हो गये अब तुम बच्चे को भी जहाँ चाहो ले जा सकती हो और बड़ी डाक्टरनी यह तुम्हारी जीजी का 'डेथ्–सर्टिफिकेट' रख गयी है उसे भी ले जा सकती हो। चाहो तो सुबह ले जाना।

नवागता ने 'डिश्चार्ज सर्टिफिकेट' और 'डेथ्–सर्टिफिकेट' दोनों ले ली फिर बोली—बच्चे को मैं अभी ले जाना चाहती हूं।

—खुशीसे। मगर सम्हाल कर रखना।

कहकर डाक्टरनी ने नर्स की ओर देखा। नर्स बोली—चलो। मैं दिला देती हूं।

नर्स के साथ नवागता चली। खास-वार्ड के नर्स से जाकर साथ वाली नर्स बोली—पेमेन्ट हो गया बच्चा दे दो

खास वार्ड की नर्स अन्दर की ओर इशारा करती हुई बोली—बच्चा वहाँ नहीं है। बड़ी डाक्टरनी उसे अपने घर

ले गई है। कह गयी है कि कोई बच्चे को लेने आवे तो मेरे पास भेजना। बच्चा वहीं से मिलेगा।

नवागता बड़ी डाक्टरनी का घर जानती थी। तुरन्त वहाँ पहुँची। उस समय बड़ी डाक्टरनी बच्चे को ही खेला रही थी। नवागता को देखते ही उसका चेहरा फक् पड़ गया। वह थूँक निगलती हुई बोली—तुम, यहाँ क्यों ?

बच्चे को लेने। मैंने अस्पताल का बिल चुका दिया।

बड़ी डाक्टरनी घूर घूर कर नवागता की ओर देखने लगी। फिर बच्चे को पालने पर से उठा कर अपनी छाती से चिपका ली। बाद को नवागता की ओर घूर घूर कर देखने लगी। नवागता भी डाक्टरनी की ओर बार बार देखने लगी।

नवागता को वहां से हटने का नाम नहीं लेती देख कर डाक्टरनी बोली—क्यों खड़ी हो...बच्चा नहीं मिलने का... तुम बच्चे की कौन लगती तो ? यह बच्चा मेरा है...मेरा है...इसे मैं नहीं दे सकती...इसकी मां मर गई है। मैं जानती हूँ इसकी तुम कोई नहीं लगती...यह मेरा है। इसका कोई नहीं है।

कहते कहते बच्चे को और दबा कर छाती से चिपका लिया। किन्तु नवागता फिर भी पीछे नहीं हटी। कुछ समय चुप रह कर बोली—नहीं, नहीं, ऐसा मत कहो। इसका सब कोई है। मैं हूँ। इसका बाप है। सब कोई है।

—बाप होता तो देखने नहीं आता ? इसका बाप पल्टन में मेजर था, मारा गया। नरपिशाच हिटलर के सैनिकों की गोली से मारा गया...

कहते कहते डाक्टरनी फूट फूट कर रोने लगी। नवागता

चकित होकर सुनने लगी। इतने में डाक्टरनी बोली—तुम्हें विश्वास न हो तो आओ। मैं सच कह रही हूँ, आओ।

कहकर एक हाथ से बच्चे को छाती से चिपका कर तथा अन्य हाथ से नवागता का हाथ पकड़ कर बगल वाले कमरे में ले गई। कमरे में घुस कर ही सामने वाले विशाल तलचित्र की ओर उंगली उठा कर बोली—वह देखो वह है इसका बाप। जब यह बच्चा पेट में तीन महीने का था उसी समय इसका बाप लड़ाई में चला गया। आज चार साल हुए उनकी मृत्यु हो गई। बच्चा भी समय पर आया था.. समय पर आया था।...आओ। बच्चे की तसवीर दिखाऊँ।

कहकर डाक्टरनी आगे बढ़ी; पीछे पीछे नवगता चली। एक मेज़ के सामने जाकर रुक गई। मेज पर एक तस्वीर थी। चारो ओर से वह तस्वीर फूल माले से भरी हुई थी। फूलों का हटाते ही बत्ती में साफ साफ दिखाई पड़ने लगी। बगल में गोद के बच्चे को लेटाते हुए डाक्टरनी बोली--मिला लो दोनों को...मैं कहती हूं वह नहीं आएंगे मगर बच्चा वापस आया। मिला तो तुम्हीं...तुम बच्चे की कोई नहीं हो...मैं हूं इसकी मां।

नवागता कुछ देर खड़ी रही, फिर बोली—तुम पागल हो। यह ठीक है कि दोनों बच्चे एक से हैं...मगर इससे क्या...

आगे कुछ कहने से पहले ही डाक्टरनी बोली—ऐसा मत बोलो...यह वही है। जिस दिन यह बच्चा पैदा हुआ उसी दिन मैं समझ गई थी। मैं चाहती थी कि उसी दिन लोगों से कहूँ। मगर परिस्थिति वैसी नहीं थी। नहीं तो भला मेरे बच्चे को मैं अलग कैसे करती।...इसकी मां ने सब बातें

बता दी थी। इसने मुझसे सब कुछ बताया था। उसने बता दिया था कि तुम डाइन हो...तुमने उसकी सास को खाया...वह अनाथा थी...उसका पति पल्टन में गया है। लाचार तुम्हारे साथ रहती थी।.. कई बार मुझसे बोली थी—देखना यह डाइन है। यह कहीं मेरे बच्चे को न खा जाय...पति पल्टन से वापस होते ही इस डाइन को झाड़ू मार कर घर से बाहर करूँगी......

नवागता के नीचे से जमीन सरकने लगी। वह पसीना पसीना हो उठी। धप् से जमीन पर बैठ गई। फिर डाक्टरनी ने मेज़ के नीचे के खाने से एक कागज निकाल कर दूर से दिखाती हुई बोली—यह देखो।

नवागता ने उधर देखा। कागज़ वैसा ही था जैसे कागज में शामको कबाड़ी ने उससे दस्तखत करा लिया था। नवागता ने आँखें बन्द कर लीं। डाक्टरनी कहने लगी—इसी में लिखकर मरने से पहले इसकी मां ने मुझे बच्चा सौंप दिया था। केवल अकेला इसका बाप बच्चे को पा सकेगा...सो वह आने का नहीं। जो पल्टन में एकबार जाता है वह कभी वापस नहीं होता है। यह बच्चा मेरा है...मेरा है...तुम इसकी कोईनहीं।

उसी प्रकार से नवागता कुछ देर बैठी रही। फिर धीरे धीरे उठकर बाहर निकल गई। तब भी उसके पांव लड़खड़ा रहे थे।

× × ×

जब सड़क पर आयी उस समय रात को ग्यारह बजे रहें होंगे। गरमी के दिन तो थे नहीं, रास्ता सुनसान था। रास्ते में कोई एकातांगा भी मिला नहीं। रेंगते रेंगते अमीना-बाद पहुँची। उस समय वहां के सिनेमा भंग होने के कारण

काफी चहल पहल था। एक्के तांगे भी चल रहे थे। एक एक्कावान ने आवाज लगाई—आर्यनगर।

नवागता ने उधर देखा। उसमें दो सवारी बैठे थे। पूरा एक्का करने का पैसा न था। पैदल ही चलने लगी। जब घर पर पहुँची तो उसे याद आया। न बिस्तर है न बत्ती। कबाड़ी ने तो सब कुछ ले लिया। फिर भी जैसे तैसे रात बिताना ही पड़ेगा। मकान के अन्दर होली। फिर भी जैसे तैसे रात बिताना ही पड़ेगा।।मकान के अन्दर होली। दरवाजा बन्द करने लगी। दरवाजा बन्द करके अन्दर की ओर मुँह किये ही थी कि अन्धेरे में उसे मालूम पड़ा—बहू! वह चीख कर पीछे हटी। झट दरवाजा खोल दी। ज्यों ही दरवाजा खोली त्योंही सामने एक तांगा खड़ा हुआ। तांगे पर से एक सज्जन उतर कर सामने वाली पान की दूकान में पूछा—क्यों साहब बता सकते हैं कि यहां पर कहीं दो औरतें मकान किराये पर लेकर रहती हैं?

आवाज नवागता के कानों तक पहुँची। इस आवाज को वह खूब पहचानती थी। उसके मुँह से निकला—इधर!

पान वाले को कुछ कहने से पहले ही आगन्तुक उधर बढ़ा। सड़क की धुंधली रोशनी में एक ने अन्य को पहचान लिया। नवागता के मुँह से निकली-आश्चर्य! आप?

आगन्तुक आगे बढ़ा—हाँ मैं हूँ!...तुम, रेणु?...मैं निर्दोष छूट गया हूँ!

नवागता ने हाथ बढ़ा दिया। आगन्तुक ने भी हाथ बढ़ाया। रेणु अपने को सम्हाल न सकी। आगन्तुक के पैर के पास मूर्छित होकर गिर पड़ी। आगन्तुक ने रेणु को सड़कों की रेणु पर से अपनी बाहों पर उठा लिया।

× × ×

सवेरे जब सुधीर अपने संगी साथियों को लेकर बहू का सत्कार करने के लिये अस्पताल में पहुँचा उस समय भी बड़ी डाक्टरनी घर पर थी। लाश ले जाने का हुक्म तो था ही। दोस्तों की सलाह से यही तय हुआ कि पहले बहू का सत्कार किया जाय उसके बाद बच्चे की खबर ली जाय।

सब लोग मुर्दा-घर से बहू की लाश निकालने गये। सुधीर ने काँपते हुए हाथों से बहू का मुंह खोला। उस समय भी बहू का चेहरा ऐसा था, मानों वह कुछ कहना चाहती थी किन्तु कह न सकी। सुधीर की आँखों से दर दर धार में अश्रु बहने लगी। लोगों ने सम्हाल कर लाश को उठा ली।

बहू का सत्कार करने के बाद लोग अपने अपने घर चले गये। सुधीर भी अपने घर आया। रेणु ने खाना वगैरह तैयार करके रक्खा था। सुधीर आश्चर्य चकित हो गया घर का बन्दोबस्त देखकर। अभी सवेरे तक कुछ भी नहीं था और इसी समय के अन्दर जरूरत की सब चीजें कहाँ से आ गई? सुधीर के मनोभाव को रेणु समझ गई। मुस्कराती हुई बोली—अकेली औरत, न मर्द कोई काम कर सकते हैं मगर दोनों के एक होते ही इसी प्रकार से असाध्यसाधन भी हो जाते हैं।

सुधीर भी मुस्करा कर कोई उत्तर देना चाहता था किन्तु अभी तक वह अपने जीवन से बहू की स्मृति को भुला न पाया था। छोटा सा 'हूँ' में उत्तर दिया।

थोड़ा सा खा पीकर जब बच्चे को लाने के लिये जाने की तैयारी करने लगा तब रेणु बोली—अभी जल्दी क्या है। फिर जाना, मैं जानती हूँ बच्चा खूब सुरक्षित है।

हुआ भी यही। शाम तक आराम करने के बाद सुधीर चला

बच्चे को लाने, उसने रेणु को भी साथ चलने के लिये कहा, किन्तु वह तैयार न हुई ।

लाचार अकेले ही अस्पताल में पहुँचा । दफ्तर से पता चला कि बच्चा बड़ी डाक्टरनी के यहाँ है । बड़ी डाक्टरनी के बंगले में गया । बड़ी डाक्टरनी ने सोचा कि किसी मरीज के यहाँ से कोई बुलाने आया है । चपरासी से खबर भेजवायी—मेम साहब कल से बहुत बीमार है । उठ नहीं सकती । आज काम पर भी नहीं जा सकी । उनसे मुलाकात न होगी ।

सुधीर ने उत्तर में कहा—उनसे जरूरत नहीं है । मैं तो अपने बच्चे को लेने के लिये आया हूँ । किसी के भी हाथ से बच्चे को भेजवा दें । न हो तो मैं ही ले आ सकता हूं । मैं बच्चे का पिता हूं ।

बड़ी डाक्टरनी से चपरासी का यह कहना था कि बड़ी डाक्टरनी भागी हुई बाहर आई सामने सुधीर को देखते ही चिल्ला उठी—बदमाश ! मक्कार ! बेईमान...आये हो बच्चे को लेने !...मैं सब जानती हूं...मत समझना कि मैं बच्ची हूं ! ...उसी डाइन ने तुम्हें सिखा पढ़ा कर भेजा है ।...मुझसे क्या छिपाओगे...बच्चे का बाप फौज में है...शायद मर भी गया होगा !......जाओ ! निकलो ! मेरे बंगले से... चपरासी ! चपरासी !

पास ही चपरासी खड़ा था । उसने कहा—हुजूर !

निकाल दो इस मक्कार को . मैंने कहा था न कि मेरी तबीयत ठीक नहीं है ! किसी को बंगले में घुसने मत देना ?

कहते ही कहते तड़ातड़ दो तीन तमाचे चपरासी को जड़ दी । चपरासी बेचारा हक्का बक्का बन गया । इतने में बड़ी डाक्टरनी फिर चिल्ला उठी--मैं कहती हूँ कि उसे निकाल दे ... फिर भी खड़े खड़े तमाशा क्या देख रहा है ?

कहते ही कहते चपरासी के लिये बिना अपेक्षा किये ही कूद कर सुधीर के पास पहुँची। मुँह से— Get out! Get out!' करती हुई सुधीर को धक्का देती फाटक बाहर कर आई। फिर जोर से फाटक को बन्द करती हुई द्वारपाल से बोली—खबरदार जो किसी को मेरे हुक्म के बिना बंगले के अन्दर पैर रखने दिया।

सुधीर कुछ देर तक फाटक के सामने ही खड़ा रहा। बात क्या है कुछ समझ में न आई, फिर अस्पताल के अधिकारियों के पास जाने का निश्चय किया। उसका सब जाना हुआ था कारण अस्पताल के सब से बड़े अधिकारी उसको अध्यापक रह चुके थे। सीधे उनके पास पहुँचा। अध्यापक एक वृद्ध अंग्रेज थे। अपने पुरातन छात्र को देखकर प्रियसम्भासन से बैठाया। वह जानते थे कि सुधीर किसी केस में फँसा हुआ था।

केस की बात, वह कैसे फँस गया था फिर कैसे छूट गया सब सुन लिया तब आज की बात उन्हें सुनाई। अध्यापक सुनकर आश्चर्य चकित हुए आहिस्ते आहिस्ते बोले—जरूर इसके पीछे कोई बात है। मैं इसमें तुम्हारी मदद करूँगा चलो टहलते हुए बड़ी डाक्टरनी के यहाँ चलें।

दोनों टहलते हुए बड़ी डाक्टरनी के बँगले पर पहुँचे। फाटक बन्द था। द्वारपाल ने अध्यापक को सलाम करके बड़ी डाक्टरनी का हुक्म सुना दिया। अध्यापक ने अपना कार्ड देते हुए कहा—जाकर कार्ड दे दो और मेरा सलाम मेम साहब को दो।

द्वारपाल कुछ ही समय में वापस आया एवं सलाम करते हुए कहा—आपको मेम साहब ने सलाम कहा है एवं जहाँ पर बीमार लेटी हैं वहीं पर बुलाया।

अध्यापक महाशय सुधीर से बोले—आओ !

सुधीर इन्कार करते हुए बोला—ना ? मैं नहीं जाऊँगा। आप ही जा कर बात कर आइये।

अध्यापक महाशय ने सुधीर की मन्शा समझ ली। वह बोले—मैं जब तक न आऊँ, जाना मत !

सुधीर ने वैसा ही करने का वादा किया। अध्यापक महाशय सीधे बड़ी डाक्टरनी के पास पहुंचे। उस समय बड़ी डाक्टरनी अकेली अपने सोने के कमरे में लेटी थी। अध्यापक महाशय को देख कर कराहती हुई बोली—नमस्कार ! आइये।

अध्यापक महाशय प्रतिनमस्कार करके बैठ गये। तब बड़ी डाक्टरनी बोली—दो दिन से अनेक मानसिक उत्तेजना के कारण तबियत बड़ी खराब है। आराम की जरूरत है।

अपनी खसखसी सन जैसी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए अध्यापक महाशय बोले—सो तो मैंने सुधीर से सब सुना। तुम्हें आराम की जरूरत है।

सुधीर ! सुधीर कौन ? डाक्टरनी जरा सर ऊंचे उठाते हुए बोली।

वह मेरा पुराना छात्र है। बेचारे को बिना किसी कारण पुलिस वाले पकड़ कर ले गये थे। भाग्य से ही बचकर आया।...और इसी बीच गड़बड़ी हो गई। आखिरी मुहूर्त्त में उसकी औरत उसे देख न पाई...यदि एक दिन पहले भी आया होता तो उसकी औरत से उसकी मुलाकात हो गई होती। कल ही यहाँ अस्पताल में उसकी औरत की दैवी विपत्ति से मृत्यु हो गई और वह भी कल ही आया....अहा, बेचारी महीना सवा महीने को एक बच्चे को भी छोड़ गई।...उसे तो आप भी जानती है ?

कहकर अध्यापक महाशय ने दाढ़ीपर हाथ फेरते हुए बड़ी डाक्टरनी के मुँह की ओर देखा। बड़ी डाक्टरनी का चेहरा पीला पड़ गया था। आँखें चार होते ही बड़ी डाक्टरनी ने आँखें बन्द कर ली। टप् टप् बूंदे उसके गण्डदेश होकर बहने लगी। वह निष्पन्द पड़ी रही अध्यापक ने फिर शुरू किया--सचमुच उस बेचारी को बद-किस्मती देख कर किसका हृदय द्रवित न हो जाय। सुना है कि बेचारी बड़ी सुशील औरत थी।

—झूठ! झूठ! अध्यापक आपने गलत सुना। मैं जानती हूँ वह बज्जात थी। उसने मुझसे झूठ कहा था...मैं नहीं जानती थी कि वह किसी criminal (अपराधी पापी) की औरत थी। मैं समझती थी की वह देश को हिटलर जैसे नरपिशाच के फौलादी पंजों से बचाने के लिये गया है। वह झूठी थी...झूठी...मैं उसे घृणा करती हूँ।...

आगे और भी बहुत कुछ कहती किन्तु बीच में अध्यापक महाशय ने रोकते हुए कहा—तुम क्रीश्चियन् औरत हो। अँग्रेज हो। तुम्हारे लिये इस प्रकार से किसी भली औरत को कहना शोभा नहीं देता है।...यदि उसने कहा होगा तो कुछ सोच कर ही कहा होगा। अपने पति को किसी खराब बात में पुलिस वाले पकड़ ले जायं यह किसी भली औरत को पसन्द क्यों आने लगा। इसमें इतना उत्तेजित नहीं होना चाहिये।

—आप नहीं समझते अध्यापक। मेरे हृदय में इस समय क्या क्या हो रहा है उसे मैं ही जानती हूँ। यदि आप मेरे हृदय के अन्दर की सब बातें देख पाये होते तो कदापि ऐसा नहीं कहते। देखिये...

कहकर, डाक्टरनी ने अध्यापक का हाथ लेकर अपने हृदय

से लगा दी। उस समय वहाँ पर हलचल मची हुई थी। अध्यापक सान्तवना देते हुए बोले—व्याकुल न होवो। अपने अनुकूल कोई बात न होने पर इतना उत्तेजित न होना चाहिये...अब तो वह बेचारी मर भी गई...पता नहीं कितना बोझ लेकर मरी होगी।

—केवल बोझ लेकर स्वयं ही नहीं मरी मेरे ऊपर भी कम बोझ नहीं लाद गई। मैं क्या करूं कुछ समझ में नहीं आती। कभी कभा आत्म हत्या करने की इच्छा होती है...और आखिर तक मुझे वही करनी होगी देखती हूँ।

—छिः। ऐसी बातें मुंह में नहीं लानी चाहियें। एक अँग्रेज महिला के मुँह से यह शोभा नहीं देती।...आखिर तुम्हारा हो क्या गया?

—इसी को तो आप नहीं समझ सकते। मुझे क्या हुआ है उसे, आप यदि औरत होते, आपके प्रिय पति लड़ाई में जाकर मर गये होते, उन्हीं की स्मृति स्वरूप आपके गर्भ में दो तीन महीने का बच्चा रह गया होता, फिर स्वस्थ सुन्दर बच्चा उचित समय पर पैदा हुआ होता,...और...और... फिर वह दो तीन महीने के अन्दर......

आगे डाक्टरनी कुछ कह न सकी फूट फूट कर रोने लगी। अबकी अध्यापक की आँखों में भी आँसू दिखाई पड़ी। वह रूमाल निकाल कर पोंछने लगे। दोनों अन्दर ही अन्दर घुलने लगे। कुछ देर में डाक्टरनी अपने को सम्हाल कर बोली—और सुनियेगा?

अध्यापक भर्राये हुए गले से बोले—नः, नः, रोको। और मुझे नहीं सुनना है। इस लड़ाई ने सभी के घर में ऐसी ही कोई न कोई बात न छोड़ गया। मेरा भी तो लड़का अपनी

पत्नी को छोड़ कर तुम्हारे पति जैसे ......। आगे अध्यापक के मुंह से कुछ निकला नहीं, केवल उनके ओंठ फड़-फड़ाने लगे।

कुछ समय तक और अध्यापक चुपचाप बैठे रहे। उनकी सब बातें इधर उधर हो गईं। आये थे क्या करने और किधर बह गये। कुछ समय और बैठ रहे। डाकटरनी के चेहरे की ओर ताकना भी अब उनके लिये दुश्वार था। वह खड़े हो गये। आहिस्ते आहिस्ते बाहर निकल गये। जाते समय दरवाजे के पास से डाक्टरनी के उद्देश में कह गये—मैं सुधीर को भेज देता हूं। जो कुछ बातचीत करना हो उसीसे कर लो।

डक्टरनी के कमरे से बाहर आकर कुछ क्षण अपेक्षा किये किन्तु फिर भी अपने को सम्हाल न पाये। अगत्या तेज कदम बंगले से बाहर निकल गये। उनकी आँखों के सामने उनका अपना लड़का, पुत्र-वधू, उसकी वैधव्य वेदना, डाक्टरनी, लड़ाई, और कितनी ही बाते घूम रही थी। वह तेजू कदम अपने बंगले की ओर चले जा रहे थे। पीछे से सुधीर ने पुकारा—सर!

—नहीं, नहीं, मुझे न बुलाओ। मैं इस मामले में कुछ नहीं कर सकता हूँ। मेरी शक्ति से बाहर का काम है। तुम स्वयं जाकर मिल लो। मैंने कह दिया है...कह दिया है।

कहते कहते अध्यापक तेज कदम चलने लगे। सुधीर पीछे से ताकता रहा। जब अध्यापक अन्धेरे में ओझल हो गये तब सुधीर बंगले के फाटक के अन्दर गया।

द्वारपाल ने सब कुछ देखा था तथा कुछ कुछ समझा भी था। वह सीधे डाक्टरनी के कमरे में सुधीर को ले गया।

डाक्टरनी बगल वाले छोटे पलंग पर लेटे हुए बच्चे पर झुकी हुई पड़ी थी। पीछे से कमरे में प्रवेश करके ही सुधीर ने कहा—नमस्कार।

द्वारपाल चला गया

—नमस्कार। आओ। बैठो।

सुधीर बगलवाली कुर्सी पर बैठ गया। तब डाक्टरनी बोली—तुम्हारा बच्चा अच्छा है

—जब आपके देख रेख में है तो अच्छा तो रहेगा ही। आप की तबियत कैसी है ?

—मैं ठीक ही हूँ। तो क्या बच्चे को ले जाना चाहते हो ?

—हां इसी इरादे से ही आया था। यदि आपको आपत्ति न हो तो...

—दूसरों के बच्चों पर मेरा क्या हक है ? तुम ले जा सकते हो। आओ, उठा लो।

इतनी आसानी से बच्चा मिल जायगा सुधीर ने यह सोचा भी न था। वह उठ कर उधर से घूम कर बच्चे के पलंग के बगल में आकर खड़ा हुआ। उस समय बच्चा सो रहा था। डाक्टरनी बोली—कुछ देर बैठो तो क्या नुकसान है। देखते नहीं बच्चा सो गया है। उसकी एक नींद हो न जाने दो।

—मुझे कोई आपत्ति नहीं। आप जब कहेंगी तब ले जाऊँगा।

—यह। यह है बुद्धिमान व्यक्ति का काम। अभी बैठो। जब बच्चे की नींद खुलेगी तब बत्ती में उसका चेहरा देखना। दुनिया में आज तक इतना अच्छा बच्चा न किसी का हुआ

न होगा। जैसा चेहरा वैसी ही हंसी। और जब हाथ पांव फेंक कर खेलता है तब देखोगे तो तुम्हें कितने भी रुपये मिले, तुम्हारा कैसा भी रोगी हो, तुम इसे छोड़कर नहीं हट सकते... एक का कौन कहे, सौ रोगी मरें तब भी न हटोगे।

—माफ करियेगा। मैं डाक्टर नहीं हूँ।

—ओहो। मुझसे गलती हो गई।...मगर इसे खिलाओगे क्या? ..देखना कहीं इधर उधर की चीजें मत खिलाना। और जो दूध पिलाओगे उस गाय की पहले डाक्टरी करा लेना। आज कल अधिकांश गाय को टी. बी की बीमारी होती है और भैंस का दूध तो कभी पिलाना मत। बिल्कुल पास ही रहना। कभी छोड़ कर एक कदम भी इधर उधर न जाना। ज्यों जरा भी जगे त्यों खेलाना। खूब सजग होकर सोना। सोते सोते जब जब करवट लेना तब सावधानी से बच्चे को देख लेना। एक काम न करो। जब तक बच्चा सोता है तब तक मैं मेरी ताक़ीदों का फेहरिस्त बना लो।

नहीं, नहीं। आप बेफिक्र रहिये। मेरी बहन बड़ी होशियार है। वह सब जानती है। वह न होती तो यह बच्चा पेट में ही मर जाता।

तुम्हारी बहन भी है? उसे तो मैंने कभी अस्पताल में आते नहीं देखा।

—आपने ख्याल नहीं किया होगा। वह शुरू से आखिर तक बच्चा और उसकी मां के साथ ही थी। वह न होती तो पता नहीं ये सब कहां बह गये होते।

—तुम किसकी बात कह रहे हो? वही, वही, उसी औरत की बात? जिसे मैंने लात मार कर बंगले से बाहर किया? उसी डाइन की बात? वही जिसने अपना नाम रेणु बताया

था। उसपर तुम विश्वास करते हो ?...तब ठहरो...तुम्हारी मृतपत्नी की राय सुन लो।

कहते कहते डाक्टरनी उठ खड़ी हुई। सुधीर से बोली—आओ मेरे साथ उस कमरे में।

आगे आगे डाक्टरनी चली, पीछे पीछे सुधीर। बगल वाले कमरे में जाकर एक मेज के पास डाक्टरनी रुक गई। चाभी से उसके एक खाने को खोला। उसमें से एक दलील निकाल कर सुधीर के हाथ में दी ! बाकायदे स्टैम्प वाला कागज था। उसमें जो कुछ लिखा था उसे सुधीर ने पढ़ा नीचे से ऊपर तक बहू के हस्ताक्षर थे। जो कि उसने रेणु से इतने दिनों में सीखा था। उसके कान तक लाल हो उठे। वह थर थर कांपने लगा। पास ही कुर्सी रक्खी थी उसपर धप से बैठ गया। डाक्टरनी बोली—देख लिये ? तुम बहन कहते थे ?

चुपरह सूअर की बच्ची !

गरज कर सुधीर ने कहा। फिर डाक्टरनी की ओर देख कर बोला—तुमने मेरी बहन के पास लिख कर भेजा था कि मेरी औरत गिरकर पेट का सीवन टूटने के कारण मरी है ? तब उसे उसके बाद होश कब आया और लिखी कैसे ?

डाक्टरनी का चेहरा बिल्कुल पीला पड़ गया। वह चकपका गई। तब सुधीर कुर्सी पर से उठते उठते बोला—समझ गया। तुम यही करती हो। डाक्टरनी बनी हो...साले पुलिस वाले मर गये क्या ? निर्दोषों को पकड़ कर जेलों में भरते हैं और तुम दिन के उजियाले में खून करती हो, षड़यन्त्र रचती हो, भोली भाली औरतों को फुसला फुसला कर जो मन में आता है वही लिखवा लेती हो ?

कहते कहते सुधीर की बांहें फड़क उठीं। उसने कूद कर

जाकर के डाक्टरनी के कन्धों को पकड़ लिया। खूब जोर से हिलाते हुए बोला—बोल तू ने ऐसा क्यों किया ?

डाक्टरनी ओंठ फड़फड़ा कर रह गई। सुधीर ने डाक्टरनी को दूर ढकेल दिया—जा! तू नारी है। अपने हाथों को कलंकित न करूँगा। तेरी इलाज तो पुलिस वाले करेंगे।

कहकर कमरे से बाहर निकल गया। फिर कुछ याद आया। पीछे लौटा। तबतक डाक्टरनी सम्हल कर खड़ी हो गई थी। अपना गाऊन झाड़ रही थी। सुधीर बोला—तू हत्यारिन है। तेरा जरा भी विश्वास नहीं। बच्चे को लेता जाऊँ।

कहकर सुधीर ज्यों बच्चे वाले कमरे में घुसा त्यों पीछे से डाक्टरनी भागती हुई आई। एवं बच्चे को उठाकर, छाती से दबाये अन्य दरवाजे से निकल गई। सुधीर ताकता ही रह गया।

कुछ देर वहीं खड़ा रहा। फिर जिस रास्ते से डाक्टरनी निकल गई थी उसी रास्ते की ओर बढ़ा। कमरे से जब बाहर निकला तो पीछे के बरामदे में पड़ा। वहाँ से देखा पीछे बगीचे को पार करती हुई एक छाया मूर्ति चली जा रही है। सड़क पर की बिजली की बत्ती से उस पर जो रोशनी पड़ती थी उससे सुधीर ने उसे पहिचान लिया। देखते देखते मूर्ति ओझल हो गई। कुछ समय और वहाँ पर खड़े रह कर सुधीर वापस हुआ। सीधे घर गया। घरमें जाकर रेणु को सब बातें सुनाई। दोनों ने मिल कर बहू की लिखी हुई दलील पढ़ी। सुधीर ने गुस्से में कहा—देख ली, बहन बहू का ?

रेणु हंसती हुई बोली—सब बच्चे की भलाई सोचकर बहू ने की थी भइया...और डाक्टरनी ने भीबच्चे के ही लिये सब कुछ की है। उन्हें माफ कर दो भइया। औरतों को तुम नहीं जानते, बच्चे के लिये क्या क्या करती हैं।

न्यायालय

आखिर लड़का जब सयाना हो गया तो उसकी शादी क्यों नहीं करते ?

गनेश की माँ ने अपने पति से जोर देकर कहा। पति उस समय थक थका कर खेत से आये हुए थे। बैठ कर अपने हुक्के के साथ सुर अलापने में मशगूल थे। हुक्का जल्दी जल्दी 'गुड़ गोबर' न जाने क्या क्या अलाप रहा था और पति भी उसके साथ 'हा:-ही-हू:' भर भर कर उसकी ताईत किये जा रहे थे। बीच में स्त्री की अवाज ने दखल दिया। फुर्सत से बोले—क्या ?

मैं कह रही थी कि अब मेरा गनेश बड़ा हुआ है, उसकी शादी होनी चाहिये।

पति भी शायद इसी बात को सोच रहे थे। एक बार जोर से हुक्के को गुड़गुड़ा कर बोले—हूँ! तू क्या सोचती है कि मुझे फिक्र नहीं है ?

फिक्र है तो तैं क्यों नहीं करते ? आखिर तुम्हीं को तो करना है।

बात मे जोर था और दबाव की मात्रा भी कम न थी। साथ साथ सर का कपड़ा जरा सरका दी और पति के सामने गाल पर हाथ धरे पैरों पर बैठी। पति एक बड़े दार्शनिक की तरह सर हिलाते हुए बोले—तू है औरत की जात। इन अहम मसलों को क्या जानेगी। कुछ समझती न बूझती बार बार शादी ही शादी करती रहती है।

कहकर हुक्के को बढ़ाते हुए बोले—ले:, जरा चिलम को ठीक से जगा दे।...गनेश की शादी कोई तुझ सी गँवार

औरत से थोड़े ही करूँगा। खास शहर की लड़की होगी। पढ़ी लिखी होगी, परी की तरह खूबसूरत होगी, सारे गाँव में एक ही होगी। जरा सब्र तो कर। सो करेगी नहीं। जब जरा आराम से हुका पीने बैठूँगा तू आकर कन्धे पर सवार हो जाएगी। आखिर लड़का बड़े से छोटा थोड़े ही हुए जा रहा है। और शहर की लड़कियाँ सयाने लड़के को छोड़कर नादान छोकरों से शादी भी नहीं करती। उनका मुकाबिला तू अपने से क्यों करती है। वे कोई तेरे जैसे आते ही पति से थोड़े ही कहेंगी—तुम घोड़ा बनो मैं पीठ पर सवार हूँगी? जरा अक्ल को दुरुस्त रखा कर।

सच कहते हो कि लड़की पढ़ी लिखी खूब सयानी होगी?

पत्नी का प्रश्न सुनकर पति ने शुरू किया—तब क्या झूठ कह रहा हूँ। मैंने सब ठीक कर रखा है। तू देखा तो कर। गनेश को गाँव के स्कूल में पढ़ाया, सो ऐसे ही जाने दूँगा?

गनेश की माँ की आँखें चमक उठीं! आनन्द से हृदय उमड़ पड़ा। चिलम को जरा हिलाकर फूँक कर हुक्के पर रख दी। फिर पति की होशियारी को सराहती हुई बोली—इतनी बातों को तुम सोच कर बैठे हो इसे मैं कैसे समझती। गनेश मेरे घर का एकलौता चिराग है। उसके लिये तुमने क्या क्या नही बनवाया। घर-द्वार गाय-भैंस सभी तो उसके लिये है। बाग का फल वही खायगा, उसके बच्चे खायेंगे। छे जोड़ी बैल, उसकी खेती, नौकर जिजमान सभी तो उसके लिये छोड़ जाएंगे। वही तो सब का मालिक है।

सर हिलाते हिलाते पति ने कहा—तू है बावरी। छे जोड़ी तो अभी है...आगे देखना कि मैं क्या करता हूँ। बहू आकर सब समझ लेगी तो बाजार में गनेश को गल्ले की दूकान भी

कर दूँगा।.. तू देखा कर। हड़बड़ा नहीं। देख तो मैं क्या क्या करता हूँ।

सुनकर पत्नी के हृदय में पति का प्रशंसा न समाया। दो तीन बार पति के मुंह की ओर देख कर बोली—तुमसे बार बार कहती हूँ कि जरा उबटन तेल लगाकर ठीक से नहाया धोया करो। चेहरे में खराश पड़ रहे हैं, तुम सुनते ही नहीं।.... जरा सब्र करो।

कहकर पत्नी उठ गई। रसोई घर से जाकर उबटन बना कर तेल की कटोरी भर कर लाई। देखकर पति मुस्कराये और जोर से हुक्के की कश लेकर धूआं छोड़ते हुए बोले—पागल हुई हो क्या। लड़का सयाना हो गया, उसके सामने मुझे उबटन लगा दोगी ?

इससे कुछ नहीं आता जाता.. और गनेश तो अभी जिजमानी में गया है। तुम उठो।

किन्तु पति टस से मस नहीं हुआ। जोर जोर से हुक्के का धूआं लेता रहा और मुस्कराहट भरे चेहरे से पत्नी की ओर कनखियों से देखता रहा। लाचार पत्नी वहीं पर धपाधप तेल और उबनट की कटोरी रखकर पास में रक्खी हुई ताजी सब्जियों की टोकरी उठाकर रसोई घर की ओर चली गई। जाते समय ऐसे पति की ओर देखी कि मानों कितनी रूठ गई हो।

सब्जी काटते-काटते सोचने लगी कि मेरे लड़के की शादी शहर में होगी, लड़की लिखी पढ़ी होगी, लड़की खूबसूरत होगी, हमें रामायण पढ़ पढ़ कर सुनायगी। मैं लड़के की वहू को लेकर मैके जाऊँगी, भाई को भावज को दिखाऊँगी. मेरी बाल्य सखियां देखेंगी, मैके वाले सब लोग देखेंगे। सब लोग तारीफ का पुल बांध देंगे। नाना प्रकार के उपहार देंगे। जिजमान

लोग रुपये देंगे, जेवर देंगे, हाथी घोड़ा और भी न जाने क्या क्या देंगे।

फिर चूल्हा सुलगाते सुलगाते सोचने लगी—शहर की लड़की, धूएं से तकलीफ होगी खाना तो मैं ही पका दूंगी वह ऊपर के काम देखेगी। मगर सर के बाल उसी से गुहराऊँगी, रोज रोज नई नई तरकीबों से जूड़ा बांध देगी। जा जा कर जिजमानों की औरतों को दिखाऊँगी। वे भाग भाग कर घर में आ आ बाल बंधवा जाएंगी। दुलहिन को बहुत सी चीजें मिलेगी। जिस जिजमान की औरत के सर में जूएं होंगी उसे डाँट दूंगी। कहूँगी, पहले अपने सर के बालों को साफ करना तो सीख फिर शहरुआ बाल बँधवाना।

× × ×

आखिर एक दिन गनेश की शादी पिता माता के मनोनीत पात्री से हो गई। गांव में आये हुए बरातियों का भली भांति सत्कार करने में गनेश के ससुर कुछ उठा न रक्खे थे। गनेश को भी सोने की घड़ी, घड़ी चैन, गले में तीनलर का सोने का हार मिला था। दुलहिन भी देखते ही बनती। उस गांव का कौन कहे, आस पास के दस बीस गांव में शायद ही कोई गनेश की दुलहिन सी खूब-सूरत थी। दुलहिन की चर्चा जगह जगह हुई। और दुलहिन को उसकी मां बाप ने जेवरों से लैस कर दिया था। शायद इतना जेवर वहां के सबसे बड़े जमीन्दार के घर में भी न होगा। किन्तु अन्य कोई चीज विशेष नहीं मिली थी। कहते हैं कि इसके पक्ष में गनेश के ससुर नहीं थे। उनका कहना था कि ये सब चीजें किसी अच्छे गृहस्थ के घर की दुलहिन को देना न देने के बराबर ही है। कारण वे सब चीजें जनमभर अलग ही रक्खी रहतीं। गनेश के मां बाप को इसकी

परवाह नहीं थी। जितना जेवर और जैसी दुलहिन मिली थी उसी से वे खुश थे। गांव वालों के पास गनेश का बाप कहता फिरता था—मेरा साढ़ू नाइयों का राजा है, चौधरी है।

गनेश की मां जिजमानों के यहां नई दुलहिन दिखाने ले जाती और जो कुछ भेंट में मिलता खुशी खुशी ले आती। सब लोगों ने मान लिया था कि दुलहिन परी से कम नहीं है। बात दूर दूर तक फैल गई।

गांव के पास ही बड़ी सड़क पर पुलिस चौकी थी। वहां के दारोगा के कान तक दुलहिन वाली बात पहुँच गई। एक दिन गनेश के बाप को बुलाकर उन्होंने अपनी हजामत बनवाई, खूब आदर किया, फिर अच्छी मजदूरी दी। बाद को बोले—जब से इस इलाके में आया तब से हमारे घर में कोई नाइन नहीं आई। औरतों को बड़ी तकलीफ है।

क्या बताऊँ हुजूर। घर की औरतें यहां तक नहीं आ सकती हैं नहीं तो आपको ऐसी तकलीफ न होती। अभी अपने लड़के की शादी करा लाया। दुलहिन शहर की लड़की है। वह आप जैसे बड़ों के घर में काम करने लायक है। मगर यहां तक आना मुश्किल है।

क्यों आना मुश्किल क्यों है...कोई तुम्हें रोकता है क्या ?

नहीं हुजूर रोकेगा कौन। मेरी औरत हो चाहे मेरी दुल्हिन हो, दोनों गांव की बहू ठहरी न। हमारे यहां गांव की दुलहिन या बहू कोई गांव से बाहर नहीं जाती बिना किसी खास काम के। जिजमानी में गांव के बाहर जाने का हममें रस्म नहीं है। जो मेरी बिटिया होती तो आपको ऐसी तकलीफ न होती।

मगर मान लो कि तुम्हारे घर में कोई बाहर गांव से न्यौता देवे तो तुम नहीं जाओगे ?

सो तो बात ही न्यारी है। उसमें तो जाना ही पड़ेगा।

बस तो यही समझो। मैं अपनी औरत की ओर से तुम्हारे घरभर को न्यौता देता हूँ। अब तो तुम्हें कोई एतराज़ न होगा ?

नहीं हु.जूर इसमें भी कोई एतराज़ की बात है। और और आपके यहां ?

बस तो कल रहा तुम्हारा न्यौता। कल तुम आना।

जो हुक्म हु.जूर का। कल ज़रूर आऊँगा।

कह कर गनेश के बाप ने ज़मीन तक झुक-झुक कर दारोगा को सलाम किया। फिर घर के लिये रवाना हुआ। रास्ता काटे नहीं कटता। इलाके के दारोगा ने उसके घर वालों को दावत दी है। कितनी बड़ी बात। उससे आगे वह सोच न सका। जितना सोचता रास्ता उतना ही लम्बा होता जाता। लुढ़कते-पुढ़कते किसी हालत में घर तक पहुँचा। दरवाजे के पास से ही एलान करते हुए कह डाला। गनेश की मां सुनते ही गद्‌गद् हो उठी। पति को सुनाती हुई बोली—मैंने दुलहिन को देखते ही नहीं कहा था कि मेरे घर में भाग्य लक्ष्मी पैर रख रही है। अब घर भर का भाग्य जगा।

शायद सुनने में गलती की हो इस कारण से और एक बार पूछी। जब गनेश के बाप ने बातों को दोहरा दिया और आगे कहा—मुझसे दारोगा ने स्वयं कहा। बार बार कहा है। कहीं गलती हो सकती है ?

तब गनेश की मां बोली—मेरे बच्चे को अब फिक्र क्या। बड़े बड़े दारोगा, हाकिम-हुक्काम के घरों में दावतें उड़ायगा

और छाती फूला फूला कर घूमेगा।...वह किसीसे कम थोड़े ही रहेगा...इस बार के फसल के बाद उसे भी घोड़ा खरीद दूँगी। घोड़े पर फिरा करेगा। हाकिम-हुक्काम के साथ उठने बैठने वाले तो राजे महाराजे होते हैं न ?

× × × × ×

सवेरे, दूसरे दिन खूब सवेरे ही उठ कर नहा धोके तैयार होकर गनेश की मां ने दुलहिन को जगाया। दुलहिन भी उठ कर नहा धोके तैयार हो गई।

आज घरभर का दारोगा के यहाँ न्यौता है। गांव भर में कल से आजतक गनेश के बाप ने प्रचार किया। रोज चाहे दस ही बजे क्यों न जिजमानी सम्हालने निकलता हो आज तो खूब सवेरे ही निकल पड़ा।—अर्थमु भइया, मुझे समय नहीं है, जरा दारोगा के यहां न्यौता खाने जाना है, मेरे घर भर को दारोगा की औरत ने न्यौता दी—ओ महेन्दर दादा, न हो तो कल ही हजामत बनवा लेना। आज तुम्हारी पारी है न, इससे कहने आया कि आज माफी दो। आज मेरा घर भर दरोगा की औरत को दी हुई दावत खाने जा रहा हूँ।—ओ राम नारायण, नरेश, खिलावन भइया, और ही कितने।

मतलब यह कि किसी न किसी बहाने गाँव भर के लोगों को यह ज्ञात करा दिया कि उसे दारोगा की औरत की दावात में सब घर भर जाना है। किस कारण से मजबूरन दारोगा ने उसके घर भर को दावात दी; अवश्य जितना उसे मालूम था, उस विषय में एक भी बात न कहा।

सुनकर, गांव वाले भी मान गये कि गनेश बहुत बड़ा आदमी हो गया। भला दारोगा न्यौता देवे और गनेश बड़ा

आदमी न हो ऐसा कैसे होगा? आखिर मुखियों-पुखियों को ही तो दारोगा न्यौता देता है न?

वढ़िया से वढ़िया साड़ी आज वक्स से निकलीं। दोनों सास वहू पहनी। वाप बेटा भी धुले हुए वगुले के पंख के से तन्जेव के कुर्ते पहनें। किन्तु चुप्पे से नहन्नी और रोरी वुन्दा टिकली-महाऊर की पोटली को साथ में ले जाने की पति से दी गई ताक़ीद को गनेश की मां ने न भूला। वह उधर यह सव सम्हालने लगी। और इधर दुलहिन महीन-मोटा कंघी-कंघा पाउडर की डिव्वी खुशवूदार तेल की शीशी आदि सम्हाने लगी। जव दारोगा की औरत ने दावात दी तो उनके साथ इसी मौके पर दोस्ती क्यों न गांठ ली जाय।

दुलहिन शहरुआ ढंग से साड़ी पहनी थी। पैर में चप्पल आँखों में काजल तथा रेशमी चद्दर को वह कैसे भूल सकती थी। आगे आगे गनेश का वाप चला उसके पीछे दुलहिन हाथ भर घुंघट पतली रेशमी चादर के काढ़कर और उसके पीछे गनेश की मां और गनेश चला। गनेश के पैर में भी ससुरार से पाया हुआ जूता और जेब में सोने की घड़ी, घड़ी-चेन लटक रही थी। यद्यपि गनेश की मां अपने सव जेवर पहने थी किन्तु दुलहिन सोने की तीन चूड़ी हाथ में और गले में एक लर के सोने के हार के अलावा और कुछ नहीं पहनी थी।

गांव से जंगल के रास्ते थाने तक जाने का यद्यपि सहल पथ था तथापि गनेश के वाप ने गांव के वजार के रास्ते को पसन्द किया। रास्ते में जिससे मुलाकात होती उसीसे एलानिया ढंग से कहता—दारोगा की दी हुई दावत खाने सव लोग जा रहे हैं।

ससुर देवते का यह रवैया देख देख दुलहिन अन्दर ही अन्दर ओठों को काटती। जितने ही लोग पूछते—कहो चौधरी कहां की तैयारी ?

उतना ही जोर जोर से एलानिया ढंग से गनेश का बाप बोलता।

जब थाने के सामने से वे लोग गुजरने लगे तब सिपाहियों में से एक ने पूछा—ओ वे कहां चला आज ?

हुजूर दारोगा साहब के यहां न्यौता खाने ! उनकी घरकी मेरे घर भर को न्यौता दिया है।

कहकर गनेश का बाप जब आगे बढ़ा तब सिपाही ने धीरे से कहा—जा बच्चू। अच्छी तरह दारोगा साहब की घरकी नौता खिलायगी।

आपस में इशारेवाजी हुई। एक दूसरे को तसल्ली दिये। एक दूसरे से बोलने लगे—घबड़ाओ मत। दारोगा साहब अकेले नहीं पचायेंगे। जैसे पैसों में हिस्सा बटवाते उसी प्रकार से 'तोफा' भी बटेगा।...हूँऊँ !

× × ×

दारोगा साहब के ठाट को अन्य कोई कैसे पा सकता था। गेस्ट-हाउस अलग, बंगला अलग, पीछे रसोई घर अलग, उधर अस्तवल अलग। गनेश और उसके बापको दारोगा साहब ने अलग गेस्ट-हाऊस में खिलाने का बन्दोबस्त कर दिया था। औरतों को अलग बंगले में खिलाने का बन्दोवस्त किया था! गनेश और उसके बाप को नौकर के जिम्मे छोड़ दिये थे; दुलहिन सास को स्वयं अपने जिम्मे लिये थे। दारोगा साहब ब्राह्मण हैं, स्वयं अपने हाथ से महिलाओं को खिलायेंगे।

दारोगा की औरत इसे समझ गई थी। दुलहिन को देखते ही उनके सामने बात और साफ हो गई। किन्तु करती क्या! दिल मसोस कर रह गई। जब से शादी हुई है तब से ऐसे कितने ही मौके आये और गये। उसके लिये यह कोई नई बात न थी। मानों पति के इस प्रकार के अत्याचारों को सहने के लिये ही विवाह बन्धन में वह आबद्ध की गई हो। दुनिया में पता नहीं कि कितनी अभागिनें इससे मिलते जुलते जीवन बिताती होंगी।

एक मेज लगी हुई थी। उसपर दारोगा के स्त्री के हाथ का बना हुआ रंग बिरंगा मेजपोप लगा हुआ था। नाना प्रकार के चीनी के बर्तन लगे थे। नाना प्रकार के खाद्य सामग्री रसोई से ला ला कर ब्राह्मणी दारोगा के हाथ के पास देती और दारोगा साहब अपने हाथों से उन्हें तस्तरियों में सजाते। पास ही बेन्च पर बैठी हुई गनेश की माँ तथा दुलहिन को सुना सुना कर कहते जाते—अतिथि अतिथि ही हैं देवता के समान हैं। मेरा भाग्य है कि इस जंगल में भी अतिथि सत्कार करने को मिला सब कुछ संयोग की बात।

यद्यपि दारोगा साहब के एकनिष्ठ भक्ति देखकर गनेश की मां के हृदय पर असर हो रहा था किन्तु दुलहिन को यह सब जरा भी अच्छा नहीं लग रहा था। उसने धीरे से अपने घूँघट के कपड़े को ऊपर सरका कर बोली—अम्मा चलो। दारोगा जीकी औरत के पास चलो।

जरा जोर से ही बोली थी। दारोगा साहब के कान खड़े हो उठे। किन्तु अपने को सम्हालते हुए बोले—उसकी तबियत जरा खराब हो गई है...इसी से मुझको करना पड़ रहा है... और मैं ब्राह्मण हूँ!

इतने में दुलहिन खड़ी हो गई और जोर देकर बोली—उठो अम्मा !

गनेश की मां खड़ी हो गई और प्रश्न की—क्यों ?

उसी में भलाई है। घर चलो ..शहरों में ऐसे लुच्चे बहुत है !

दारोगा चौंक उठा। दुलहिन की ओर देखा। दुलहिन घूंघट के कपड़े को जरा नीचे सरकाती हुई बोली—किसी ने आपको सर की कसम दी थी...जब आपकी औरत ठीक होती तब देते।...चलो अम्मा अब एक मिनट नहीं...

कहकर अपनी सास के हाथ को पकड़ कर झटका देती हुई बोली—चलो !

सास के मुँह से एक भी बात न निकली। दुलहिन के पीछे पीछे चलने लगी।

न, न, ऐसा नहीं होगा....नहीं होगा...घर से अभुक्त अतिथि चली जाएंगी यह मैं न होने दूँगी। दारोगा साहेब का दुनिया में कोई नहीं है....मेरे मांग में जलजलाती सेन्दूर है।

कहते कहते भागती हुई दारोगा की औरत दरवाजे के पीछे से आई एवं दुलहिन का हाथ पकड़ी। दोनों रुक गयी। एक प्रकार से घसीटती हुई दारोगा की औरत ने दोनों को खाने के सामने लाई। मौका अच्छा नहीं भांप कर दारोगा साहब खिसक पड़े। दुलहिन को कुर्सी पर दबा कर बैठाती हुई दारोगा की औरत बोली—यह तुम्हारा नहीं सतीत्व का विजय है!

धीरे से अपने गले की सोने की जंजीर उतार कर दुलहिन के गले में डाल दी। मूक भाषा में धन्यवाद दी। दुलहिन से सटकर बैठ गई।

× × × ×

जब से गनेश की दुलहिन को उसके मैके से यहां लाया गया था तब से वह एक बार भी मैके नहीं गई थी। आज उसके बाबू उसे ले जाने के लिये आये। नाना प्रकार के अनुनय विनय करने के बाद गनेश की मां राजी हुई। शाम की गाड़ी से जाना तय हुआ। साथ में गनेश भी जायगा।

शाम को दो दो बैलों की दो गाड़ी तैयार की गई। घर से दुलहिन अपनी सांस तथा ससुर के आशीर्वाद एवं अश्रु की बूंदें सर पर लेकर रवाना हुई। उनकी गाड़ी जब थाने के सामने से गुजर रही थीं उस समय दारोगा थाने के सामने कुर्सी लगाकर बैठे पता नहीं क्या लिख रहा था। दुलहिन अपने घूंघट की ओट से देखी—हां यही है वह झूठा। यही वह धोखे बाज।

दुलहिन के सामने झूठा धोखे बाज दारोगा से बढ़ कर घृणय कोई नहीं था। उसने अन्य ओर मुंह फेर लिया। रास्ते उसी की बात सोचती गई। जब जब दारोगा की औरत की दी हुई जंजीर पर हाथ पड़ता तब तब मनमें कहती—दुनिया में किस प्रकार से अंधेरे के बगल में उजियाला और धोखे से लगी हुई ईमान रहती है। दूसरे दिन जब घर पहुँची दिन भर सब से मिलने जुलने में गया शाम को अकेली भक्तिन बूआ से मिलने गई। भक्तिन बूआ किसी जमाने में किसी स्कूल में मास्टिरनी थी किन्तु बहुत दिनों से वह सब छोड़कर अब केवल बैठी रहती और कोई आ जाती तो उपदेश तथा अपने जीवन की अभिज्ञता बताया करती। दुलहिन को वह खूब चाहती थी एवं दुलहिन भी उनके उपदेशों को अक्षरशः पालन करती थीं। बात बात में दुलहिन ने दारोगा की सब बातें कह सुनाई। साथ साथ टिप्पणी करती हुई बोली-देखली भक्तिन बूआ वह कितना

झूठा और मक्कार है। ऐसे लोगों को तो सीधे फाँसी के तख्तों पर चढ़ा देना चाहिये।

बूआ ने दुलहिन का गुस्सा देखकर मुस्कराया। फिर आहिस्ते आहिस्ते बोलना शुरु की–मिथ्या वाक्य अथवा मिथ्या आचरण हम लोग प्रायः ना पसन्द करते हैं। सत्य है किन्तु फिर यही मिथ्या ही जब हमारे सन्मुख छद्मभेश में आता है तब हम उसे पहिचान भी नहीं सकते। सिनेमा के चित्रों में दुख की कहानियों को अथवा उपन्यास या कहानी में उन बातों को देखकर या पढ़कर हम बार बार अश्रुवर्षण करते हैं। हम भूल जाते हैं कि ये सब काल्पनिक घटनाये हैं। कारण वे घटनायें हमारे जीवन से सीधा सम्बन्ध रखते हैं। हमारे स्वार्थों के साथ सम्पर्कित होने के कारण ही हम उतने व्याकुल हो उठते। उन्नत हृदय देश हितैषी नवयुवक, सन् बयालीस में लोगों पर सरकार ने जो अत्याचार किया उसका नाटक देखकर हम गुस्से में एक ओर कांपते रहते हैं और अन्य ओर सरकारी खैरख्वाह लोग ताली पीटकर सरकारी अफसरों को बधाई देते हैं। यहां भी वही व्यक्तिगत स्वार्थ से सम्पर्क की बात। प्रत्येक मिथ्या अथवा सत्य को इसी प्रकार से दो अथवा उससे भी अधिक दृष्टिकोण से देखना पड़ेगा। एवं ये हैं तथा रहेंगे भी। सवाल तो केवल इतना ही है कि कौनसा दृष्टिकोण अधिक महत्व पूर्ण है। और उनमें भी प्रेम तथा युद्ध की जब बात उठती है वहां तो मिथ्या का ही अधिपत्य देखा जाता है। और वे बड़े महत्व पूर्ण भी होते हैं। कि प्रेमिक मिथ्या टाप टीप न करे तथा हृदयोच्छ्वास से भरी हुई बाते न करे तो शायद नये फी सदी क्षेत्र में प्रेमिका के विफल मनोरथ ही होना पड़े, यदि युद्ध में केवल अपनी ही जीत और शत्रु की हार न दिखाई जाय तो

अपने सैनिक एक दिन भी रण में नहीं टिक सकते। अर्थात्, स्वयं मिथ्या और अनैतिक होते हुए भी सैनिकों के नैतिक बल को उसी के द्वारा प्रोत्साहन मिलता है वे खूब डट कर लड़ते हैं। उसे भी जाने दो, चुनाव जीतने के लिये बड़े बड़े देश पूज्य बिल्कुल झूठ कहकर अपने पक्ष में वोट डलवा लेते हैं। यदि विश्लेषण करके देखा जाय तो देखेंगे कि सभी जगह स्वार्थ साधन के साथ मिथ्या का गूढ़ सम्बन्ध है। इसी से जो जितना अधिक स्वार्थी है उसे उतना ही अधिक मिथ्या का आश्रय लेना पड़ता। वास्तव जगत् में, राजनीति में, प्रेम में और अन्यान्य समस्त संसार परिचालन के कार्यों में मिथ्या ही प्रभुत्व करता है। ज्यों ज्यों स्वार्थों की प्रबलता बढ़ेगी त्यों त्यों मिथ्या का भी प्रचार तथा प्रसार बढ़ेगा। इसी से बेटी कहती हूँ कि आदर्श महिला बनो, महिलाओं को परार्थ काम करके दिखलाओ तभी तुम्हारी विजय होगी। परार्थ काम करने वालों की अन्त में विजय होती ही। अभी तो जीवन में तुमने एक ही जगह पर इसका प्रयोग विशुद्ध चित्त से की और उसका फल भी तुम्हें हाथों हाथ मिला। गले की जंजीर को तुम्हें दारोगा की औरत ने दी है वह केवल उसी की दी हुई चीज न समझो। वह जंजीर सारे नारी समाज की ओर से तुम्हें मिली है, जानना! यदि किसी दिन कोई नारीत्व के विजय के विषय में कोई कथा लिखेगा या उपमा देगा तो उसे तुम्हारी जैसी नारियों को खुर्दबीन से ढूढ़ कर निकालना पड़ेगा। अपना कर्तव्य किये जाओ।

× × × ×

दुलहिन के बाप ने सवा सेर सोना सहित कन्यादान किया है; यह बात जब से उड़ी हुई थी तबसे गाँव के चोर सजग थे।

किन्तु गनेश की मां के सयान-पन के कारण चोरों को लाख कोशिश करने के बावजूद भी पता न चला। दो चार दिन के अन्दर ही सब चीजें नदारत होगईं थीं, चींटी को भी पता न था। चोर तो चोर उनके परदादे भी पता नहीं लगा सकते थे। आखिर चोरों ने मिल कर डांका डालने की सलाह की। फिर विलम्ब की क्या जरूरत। गनेश के घर में डांका पड़ा। किसी के पास गाँव में बन्दूक थी नहीं। लुकछिप कर एक आध जने थानेमें खबर देने पहुंचे। पुलिस वालों से ऐसा उत्तर मिला कि बेचारे निराश हुए। डांकू लोग जब तक गनेश के बाप-पर प्रहार करते रहे तब तक गनेश की मां मौन साधे रही, किन्तु उसको खतम करके जब गनेश को पकड़े तब गनेश की मां ने जगह बता दी। डांकू लोग अपनी कामयाबी पर खुश हो कर बंधी हुई दुलहिन को दो चार बार चुम्बन आदि करके ही छोड़ कर माल सहित चम्पत हुए।

दूसरे दिन जब लोगोंने गनेश के बाप का लाश देखा तो दाँतों तले उँगली दबा दिये। जबान अलग, हाथ अलग, पांव अलग, धड़ अलग। सब अलग अलग अँगों को बटोर कर थाने में ले गये। दारोगा ने एक बार कनखियों से देखकर ही कहा—लेजा।

सब लोग ले गये। सत्कार आदि करके वापस लौटे। रोने धोने लगे।

डांकू लोग लूट के माल को शहर में बेचने गये। जब सोनार ने सोने के जेवरों को कसा तो उन्हें पता चला कि माल कैसा है। चुप्पे से पुलिस में खबर दिया। पुलिस ने सब को पकड़ ली। मार कूट करने पर एक फूटा। सब बातें पुलिस के बड़े साहब को मालूम हुई। वह मौका देखने के लिये गनेश

के गाँव में पहुँचे। दारोगा भी भागा हुआ पहुँचा। बड़े साहब ने दारोगा से मामले का विवरण पूछा। दारोगा ने कहा—मेरे यहां किसी ने रिपोर्ट नहीं किया। मालूम होता है कि मृत आदमी का लड़का डाकुओं के साथ मिला हुआ है। चुप्पे से डांका डलवा दी और अपने बाप को जला दी।...यों तो बाप-बेटे में रुपयों के मामले में मनमुटाव है, इसे मैंने भी सुना था।

फिर क्या था। साहब ने गनेश को पकड़ लिया। गनेश की दुलहिन कुछ कहना चाहती थी। किन्तु आगे बढ़ते ही दारोगा ने कहा—हजूर, जब से इस रांड़ से शादी हुई तभी से यह सब आफत। गाँव वालों को भी यह चैन से रहने नहीं देती। यहां तक कि मुझे फँसाना चाहती थी।

दुलहिन आहत सी पीछे हटी। साहबने कहा–Jorruped असच्चरित्रा! साहब के चले जाने के बाद गनेश की मां रोती हुई बोली–दुलहिन! तुम तो पढ़ी लिखी हो, साहब ने क्या कहा कुछ समझ पाई?

उल्लू का पट्ठा क्या कहेगा? कहा कि अपना रास्ता आप बनाओ।

× × × × ×

दारोगा का दरवाजा खटका। सोते हुए दारोगा को अर्दली ने जगाया। दारोगा हड़बड़ा कर उठ बैठा। अर्दली ने एक चिट्ठी बन्द लिफाफे में दी। आधी रात को चिट्ठी कैसी? बत्ती में चिट्ठी को दारोगा ने पढ़ा। चिट्ठी में लिखा था—हुजूर माई बाप हैं। मुझसे जो कुछ कसूर हुई है उसे माफ करिये। मैंने आपके समस्त प्रस्तावों को मान लिया जैसा कहियेगा वैसा होगा। मैं छद्मभेष में आई हूँ। किसी को पता न चले इस लिये कलक्टर साहब का नौकर बनकर आयी हूं। आखिर

मेरी भी इज्जत है। किसी से कहियेगा नहीं। बाहर खड़ी हूँ।—
गनेश की दुलहिन !

दारोगा साहब उछल पड़े। अर्दली से बोले—कलक्टर साहब के नौकर को यहाँ लाओ। जल्दी लाओ।

अर्दली चला गया। दारोगा साहब ने झटपट शराब की बोतल उठा ली। बगलवाले कमरे में उनकी औरत सोई थी उसके दरवाजों को बन्द कर दिये। मन में बोले—मांगे न मिले भीख और न मांगे मिले मोती। आखिर घूम-फिर कर दर्शन दिये। सीधी उँगली से घी थोड़े ही निकलता है।

दुलहिन अर्दली के साथ कमरे में दाखिल हुई। मेट्-अप ऐसा की थी कि दारोगा साहब को भी धोखा हुआ। बत्ती के सामने जब ठीक से पहिचान लिये कि औरत ही है मर्द नहीं तब अर्दली से बोले —तुम जाओ। जरा सजग रहना। यदि जरूरत समझेंगे तो बुला लेंगे।

अर्दली चला गया दरवाजा बन्द हो गया। तब दारोगा साहब ने हाथ फैला कर कहा—आओ।

दुलहिन एकदम दारोगा साहब की गोद में जाकर बैठ गई। दाहिने हाथ में गनेश के बाप का सबसे बड़ा उस्तरा खोले हुए सावधानी से रक्खी थी। ज्यों दारोगा साहब ने मुह चुम्बन के लिये मुंह बढ़ाया त्यों एक ही घाव में नट्टी उड़ा दी। दारोगा साहब साथ साथ ढलक पड़े।

जिन्दा तो नहीं रह गया ? बत्ती लेकर भली भांति परीक्षा की। नः। घर खून से भर गया। धीरे से बत्ती उठा कर बगल वाले कमरे में गई। सर से साफा उतार दी। बालों को जरा ठीक कर ली। फिर दारोगा की औरत को जगाई। हड़बड़ा कर वह उठ बैठी। बत्ती में दुलहिन को देख कर ही पहिचान ली।

खून से कपड़े भरे थे । बोली—एं...तुम...इस समय...ऐसे ?

हाँ मैं ही हूँ दीदी ! तुम पुलिस में खबर दो । मैंने दारोगा साहब का खून किया है ! देखो मेरे हाथ में उस्तरा है ! इसीसे मैंने मारा !

दारोगा की औरत ने दो तीन बार दुलहिन की ओर देखा फिर झपट कर उसके हाथ से लालटेन को ली । भागी हुई बगल वाले कमरे में गई । पलंग के पावे के पास दारोगा की लाश पड़ी थी । खून से घर भरा रहा था । चुपचाप खड़ी रही । पांव लड़खड़ाने लगे । जमीन में लालटेन को रख दी । धप से बैठ पड़ी । कुछ समय तक वैसे ही बैठी रही । इतने में पीछे से दुलहिन आकर बोली—दीदी !

उत्तेजित होकर खड़ी हो गई एवं चीख कर बोली—हरामजादी ! दीदीवाली ! दीदी का सर्वनाश करके भी आश न मिटी । आई है तो ले ! ले ! ले ! काट, मेरा भी गला काट ! ले काट !..

कहते कहते दुलहिन के जिस हाथ में उस्तरा थी उस हाथ को पकड़ने गई । दुलहिन ने हाथ हटा लिया और कहा—इससे अपवित्र गला काटा गया.. इसे तुम न छूओ दीदी ! तुम पुलिस में खबर दो । यह उन्हीं के छूने लायक है ।

पुलिस का नाम सुनते ही दारोगा की औरत को होश आया । वह सम्हल गई । धीरे से बोली—चुप ! हल्ला बहुत हो गया । अब आ मेरे साथ ।

कहकर ही एक मुहूर्त्त और अपेक्षा किये बिना एक प्रकार से घसीट कर दुलहिन को बंगले का पीछे के दरवाजे के पास ले गई । मुँह के पास मुँह ले जाकर बोली—दीदी का हुक्म । चुपके से घर चली जा । बस मेरा हुक्म !

दुलहिन और एक बात भी मुंह से निकाले बिना चुपके से निकल गई। शायद दीदी के हुक्म के विरुद्ध उसमें कुछ कहने की भी शक्ति न थी। झट दरवाज़ा बन्द करके दारोगा की औरत अपने कमरे में पहुंची। वहाँ की लालटेन तेज कर दी। इतने में दारोगा के कमरे के सामने वाला दरवाज़ा ढकढकाने की आवाज आई। दारोगा की औरत ने कहा—कौन?

हुज़ूर मैं हूँ।...कैसा हल्ला हुआ?

नहीं तो। कोई हल्ला नहीं। तुम जाकर छोटे दारोगा को झटपट बुला लाओ। कहना बहुत ज़रूरी काम है। जल्दी जाओ।

जो हुज़ूर का हुक्म। मैं अभी बुलाये लाता हूँ।

अर्दली जब चला गया तो दारोगा की औरत ने पानी की बाल्टी और कपड़े का टुकड़ा हाथ में लिया। लालटेन से देखती जाती जहां कहीं खून का दाग़ मिलता पोंछ देती। पीछे के दरवाजे से लेकर अपने कमरे तक के जितने दाग़ थे सब पोंछ दी। इतने में उसकी निगाह दुलहिन की छोड़ी हुई पगड़ी पर गई। झट उसे उठाली। भागी हुई रसोई में पहुँची और बत्ती से थोड़ा सा तेल डालकर उसे भी जला दी। फिर निश्चिन्त होकर आकर के पति के कमरे में बैठी। थोड़े ही समय में छोटे दारोगा साहब घबड़ाये हुए आये। दारोगा की औरत ने दरवाजा खोल दिया। अन्दर छोटे दारोगा दाखिल होते ही चौंक उठे।

हैं यह क्या? यह कैसे हुआ?

मुझे पहले गिरफ्तार करो फिर बात करना। यह सब मेरा काम है।

छोटे दारोगा को विश्वास हो गया। उसने अर्दली को

हुक्म दिया—थाने से पुलिस वालों को बुला लाओ और नायक से कहो कि शहर में कप्तान साहब को टेलीफोन कर देवे। वह तुरन्त आवें।

अर्दली भागा हुआ थाने में गया। थाने में भगदड़ मच गई। छोटे दारोगा ने दारोगा की औरत को हवालात में भेजवा दिया। मकान को चारो ओर से घेरवा लिया। दो तीन घन्टे में कप्तान साहब आये। सब कुछ देखे। फिर दारोगा की औरत के पास गये। उनसे पूछा—कैसे क्या हुआ?

दारोगा की औरत दृढ़ स्वर से बोली—जो कुछ हुआ सब सामने है। अधिक मैं कुछ कहना नहीं चाहती। सब कुछ आपने स्वयं देखा होगा।

कहकर ऐसे मुंह फेरकर बैठ गई जिससे और कुछ पूछने की हिम्मत साहब को न हुई। साहब अन्य ओर मुड़े। जब अर्दली के मुंह से रात वाले कलक्टर साहब के नौकर वाली बात सुने तथा उसने चिट्ठी लाया था सुने तब चिट्ठी की तथा कलक्टर के नौकर की तलाश होनी शुरू हुई।

चिट्ठी पाने में देर न हुई। सामने ही दारोगा के पलंग पर थी। चिट्ठी को साहब ने पढ़ा। तुरन्त साहब को गनेश की बात याद आई साथ साथ इसका भी पता चल गया कि कलक्टर का नौकर बनकर कौन आया था। पुलिस लेकर साहब गिरते पड़ते फिर एकबार गनेश के घर पर धावा बोले। गनेश की दुलहिन उस समय चुपचाप बैठी रातवाली घटना की बात सोच रही थी। इतने में कप्तान जाकर सामने खड़े हो गये। दुलहिन झट उठकर खड़ी हो गई एवं बोली—आप आ गये। मैं तैयार हूँ। चलिये।

कप्तान अवाक हो गया। ऐसी औरत तो उसने जीवन में कभी नहीं देखा था। उसने कहा—आखिर तुम भी तो कुछ कहोगी ?

मुझे कुछ नहीं कहना है। आप जिसको ढूंढने आये हैं वह मैं ही हूँ।

कहकर साहब से आगे बाहर निकल आई। पीछे से छोटे दारोगा बोले—

यही औरत सब बात की जड़ में है हुजूर !

साहब ने कहा—Yes she is corrupted ! औरट असच्चरित्रा है !

× × × ×

कचहरी खचाखच भरी हुई थी। दारोगे का गला काटा गया। दो औरतें पकड़ी गईं। दोनों में से एक भी नहीं कहती कि उसने नहीं किया एक तो दारोगा की खास औरत है। लोग उमड़ पड़े थे।

बगल की कचहरी भी भरी हुई थी। अपने बाप को टुकड़ा टुकड़ा करके काटा। मुंह से कुछ नहीं कहता। औरत के जेवर के पीछे यह सब हुआ।

उधर की कचहरी भरी थी। डकैतों ने एक के लड़के के साथ मिलकर डकैती की। टुकड़ा टुकड़ा करके एक को काटकर उसकी औरत से जेवर कहां पर है उसे कबूल करवाया।

छोटी कचहरी में लोग तमाशा देख रहे थे। साहू और उसकी औरत ने धोखा देकर नकली जेवर देकर कन्या दान किया था।

अखबार वाले खबर छापकर सारे देश में चालान देंगे। लोग पढ़ेंगे न्यायालय में यह हुआ, न्यायालय में वह हुआ। कोई

कहेगा—शाबास; कोई कहेगा-थू थू; कोई कहेगा-दुश्चरित्रा; कोई कहेगा—पितृ घातक। किन्तु न्यायालय का उससे बनता बिगड़ता क्या है। वह तो है न्यायालय न!

महान

मोहित को जिस वार्ड में रक्खा गया था ठीक उसी के पीछे सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब का बंगला था। मोहित 'ए'क्लास का बन्दी था। वैसे पैसे वाले का भी लड़का था और देखने सुनने में भी बुरा न था। स्वभाव भी अच्छा ही था।

उसी वार्ड में उसके सिवाय और भी दो आदमी रहते थे। एक था उसका झाडूवाला और दूसरा बावरची। जो बावरची था वह जाति में ब्राह्मण था।

एकदिन बात बात में मोहित को पता चला कि उसका बावरची गाना गाने जानता है। सुनकर उसने आग्रह करके कहा–सुनाओ।

बावरची आना कानी करने लगा। मोहित ने सोचा कि शायद कुछ देने पर राजी हो। झट डिबिया से एक सिगरेट निकाल कर दे दिया बदले में आशीर्वाद पाया और अपनी तारीफ सुनने को मिली। अभीतक असली बात तो वैसे ही रही।

याद दिलाने के लिये मोहित ने कहा—सिगरेट पी लो फिर गाना होने दो।

फिर भी बावरची समझा नहीं ऊपर से कहने लगा—हाँ, बाबूजी। आपने जब मेहरबानी की तो उसे पीऊँगा ही।... मगर मैं जानता हूं कि बड़े आदमियों के लड़कों के साथ कैसा व्यवहार किया जाता है ..आपके सामने कहीं पी सकता।

भला अब और कैसे कहता। कारण वह तो बहुत बड़े आदमी का लड़का बन गया न। चुपचाप लेट गया। बावरची कुछ देर बैठा रहा फिर धीरे धीरे उठ कर चल दिया। मोहित ने भी बत्ती तेज करके अपनी किताब में मन लगाया कुछ देर पढ़ता रहा फिर बत्ती बुझाकर सो गया।

× × ×

साहब के बंगले में और मोहित को रहने के वार्ड में केवल एक ऊँची दीवार की बाधा थी। व्यवधान इतना था कि साहब के बंगले की एक एक बात सुनाई पड़ती थी। साहब की लड़की को गाने का बड़ा शौक था। अक्सर रात को एसराज के साथ वह गाया करती थी और मोहित पड़े पड़े सुना करता। यही उसके जेल जीवन के लिये एक दिलबहलावे की चीज थी।

इसी प्रकार से एकदिन अपने बिस्तर पर लेटे लेटे मोहित गाना सुन रहा था साहब की लड़की सिनेमा का गाना गा रही थी—मैं तो बन की चिड़िया ..

जब साहब की लड़की का गाना समाप्त हुआ तब पास में पड़ा बावरची बोला—उसने गाने को बिगाड़ कर गाया। ठीक से नहीं गाना जानती।

मोहित बेचारा इस कला में बिल्कुल कोरा था। उसे ठीक बेठीक का क्या पता। उसने कहा—तो तुम्हीं ठीक से गाकर सुना दो न।

बबरची बेचारा सन्दिग्ध दृष्टि से बाहर पड़े हुये सिपाही

की ओर देख कर बोला—गाऊँ तो जरूर बाबूजी।...मगर सवेरे बिना डन्डा बेड़ी लगवाये छोड़ेगा नहीं। और ऊपर से मारेगा सो तो अलग।

उसका कहना ठीक था। जेलमें कैदी गा नहीं सकते हैं। यदि किसी ने गलती से इस नियम का व्यतिक्रम किया तो उसके लिये पचासों सजा मौजूद हैं।

कारण को जान कर मोहित ने कहा—परवाह नहीं। धीरे धीरे चलने दो।

बावरची का मोहित पर विश्वास था। वह जानता था कि यदि सिपाही ने पेश भी कर दिया तो जेलर से कह सुन कर मोहित छुड़ा लेगा, मामला साहब तक न जाने पाएगा। बवरची ने गाना शुरू कर दिया।

गाने का दो एक पद गाते ही मोहित समझ गया कि बावरची उच्च कोटि का गवैया है। बावरची अपने धुन में मस्त हो गया।

अचानक बवरची को चुप होते देख कर मोहित ने कहा—क्या हुवा ?

बवरची ने जंगले की ओर देखा, उसका चेहरा फक हो गया था। सामने सिपाही खड़ा था। मोहित के कुछ कहने से पहले ही जंगले के उस पार का सिपाही बोल उठा—क्यों बे बन्द कर दिया ? गा गा कुछ परवाह नहीं। पहरा मेरा है ?

अन्तिम बातों को कहने के साथ साथ सिपाही का हाथ मूछों पर चला गया फिर क्या था। अब तो बावरची खूब जोश-खरोश के साथ गाने लगा। एक, दो, तीन, कई गाने हुये। सिपाही गवाता रहा मोहित को मौज था।

गाने के अन्त में सिपाही ने जेब से निकाल कर उसे आठ

बीड़ी दिया। कैदियों के लिये एक बीड़ी ही बहुत है तो आठ बीड़ी का क्या कहना। मोहित ने समझ लिया कि सिपाही को भी बहुत खुशी हुई। कारण जेल में खुशी का मापदण्ड बीड़ी ही होती है। बावर्ची इतना खुश हुवा कि रोज गाना सुनाने का वादा किया।

× × × ×

दूसरे दिन शाम को सिपाही जब नौकरी में आया तो वह मूंछों को ऐंठते हुए जंगले के पास आकर पुकारा पण्डित्!

पण्डित तैयार बैठा था। वह झट जंगले के पास पहुँचा। सिपाही ने लालटेन से एक बीड़ी सुलगा कर पण्डित के हाथ में दिया। फिर मूछों को ऐंठते हुए कहा—तूने जो गाना गाया उसे साहब के बंगले वालों ने सब सुना। बंगले का सिपाही कह रहा था। सबको खूब पसन्द आया। और आवे भी क्यों न। तू बहुत होशियार है।

पण्डित की आंखें चमक उठी। उसने झट कहा—मेम साहब से कहना से कहना दिन दिन दिलावें।

धत् पागल! मैं इतना बेवकूफ हूँ? तेरा नाम लेता तो मुझे भी भुगतनी नहीं पड़ती? मुझे पन्द्रह साल नौकरी करते हो गये। मैं क्या नहीं जानता कि 'अफसर के अगाड़ी और घोड़े के पिछाड़ी' नहीं जाया जाता। मैंने इत्ती सी बात किसी को जानने न दिया। साहब के बंगले के सिपाही ने ज्यों पूछा, मैंने तुरन्त कह दिया—वही 'ए' क्लास के बाबू गाते थे। सुन कर उसने कहा—तभी तो......

मोहित के कान खड़े हो गये। मोहित ने कहा—क्या बोले जमादार?

मैं कोई चूकने वाला था? मैंने झट आपका नाम ले लिया।

मुझे नौकरी करते पूरे पन्द्रह साल हो गये। मुझे क्या इतना भी नहीं मालूम कि आपलोग राजनैतिक बन्दी हैं, और आप लोग चाहे जितना शोर मचावें आप से कोई कुछ नहीं कह सकता ? और कहे भी तो आपलोगों का कुछ बनता बिगड़ता थोड़ो है।......

मोहित का सर चकरा गया। अरे छी छी, राजनैतिक बन्दी होकर सिनेमा के गाने। वह चुपचाप लेटा रहा। सिपाही कुछ देर तक अपनी तारीफ करने के बाद सोचा कि बाबू मेरी बुद्धिमता को देखकर अवश्य ही दंग रह गया होगा। प्रश्न किया—क्यों बाबू कैसा लाजबाब जबाब दिया ?

उस समय मोहित को काटो तो खून न निकले। सिपाही ने फिर से कहा—क्यों ?

मोहित ने गिड़गिड़ा कहा—ठीक है।

कहकर, करवट बदल कर लेटा रहा। सिपाही ने पंडित से कहा—पंडित दोस्त ! आज और बढ़िया होने दो। बाबू का दिल बिल्कुल हरियाय उठे ऐसा गाव।

पंडित समझ गया कि सिपाही कैसे गानों के लिये कहा। ढूंढ ढूंढ कर जिसे कहते हैं 'अदा करता'; पंडित अदा करने लगा। गानों को सुनकर सिपाही तो झूमने लगा किन्तु मोहित का होशहवाश गायब। लज्जा के मारे बिस्तर में धंसा जाने लगा। और मनमें सोचता—कैसी शर्म की बात है।

जब तक गाना चलता रहा तब तक किसी को घन्टे की ओर ध्यान देने को फुर्सत न थी। नहीं तो जेल के घन्टों की आवाज कैदियों के कान तक बिना पहुँचे रहते नहीं। कैदियों के लिये जेल के घन्टों की आवाजों को गिनना बहुत बड़ा काम है। किसी भी कैदी से किसी भी समय यदि 'कितना बजा'

पूछा जाय तो वह खूब निश्चयता के साथ बता सकता है कि इतना बजा। कारण जेल के घन्टों की आवाज ही एक ऐसी चीज है जो उनकी सजाओं को उसी प्रकार से घिसती रहती है जिस प्रकार से किसी झरना का पानी पहाड़ी को घिसता रहता है।

मोहित तो मुर्दा सा पड़ा रहा। गाने को बन्द करवाना उसकी शक्ति से बाहर का काम था। उससे तो और भी बदनाम होता। सबेरे ही जेल भर में फैल जाता कि ये 'ए' क्लास के बाबू अपने को कैदी ही नहीं समझते। बेचारा पण्डित गा रहा था उसे ही रोक दिया। उससे 'ए' क्लास के राजनैतिक बन्दियों के शान पर धब्बा आता न। और तमाशा यह था कि वह समय ऐसा था कि कोई जेल का अफसर उस समय गस्त के लिये भी नहीं आता। नहीं तो शायद मोहित को राहत मिलती। मन-ही-मन जेल अफसरों को कोसता जाता था और कहता जाता था—रोज तो एक न एक कैदी को पकड़ते, कोई सोया है, किसी ने बीड़ी पीया है, किसी ने तसला बजाया, कोई अपना बिस्तर छोड़ कर दूसरों के बिस्तर पर गया और भी क्या क्या किया है देखते फिरते, और आज जो मेरे सर पर बैठकर मेरी छाती पर पत्थर फोड़ा जा रहा है इसे कोई नहीं देखता।

यों भले ही वह कैदियों को पेशी करने के खिलाफ हो किन्तु आज उसी के सहारे अपनी इज्जत को बचाना चाहता था। चाहता था कि स्वयं साहब आवे और उस बेहूदा पंडित तथा उस बज्जात सिपाही को पकड़ लेवे। मामले का भंडा फोड़ हो जावे। ज्यों ज्यों बंगले के सिपाही के साथ उस सिपाही की आज की बातचीत की याद आती

त्यों त्यों वह गुस्से में काँपता रहा। किन्तु . सब कुछ बेकार था। न कोई आया न गया। मोहित को चुपचाप पड़ा रहना पड़ा। पंडित ने सोचा कि बाबू मस्त हुए, सिपाही समझा कि बाबू को घर की बातें याद आई। यह तो मोहित ही जानता था कि उसे क्या हुवा।

जब गाने का अध्याय खतम हुवा और वे आपस में अपना लेन देन करने लगे तब जाकर मोहित के जान में जान आया। मोहित स्वस्ति का सांस लेते हुवे बोला—बाप्! अब प्राण बचा लाखों पाये।

पंडित से कहा—पंडितजी अब तो सोवोगे न ?

पंडित ने सोचा कि शायद बाबू का दिल नहीं भरा पास आकर पूछा—और सुनाई ?

पूरा पैकेट सिगरेट का पंडित के हाथ में देते हुये मोहित ने कहा—नहीं, नहीं। सो जाओ। सो जाओ। रात बहुत हो गई।

दिलमें कहा—मैंने तो कोई अपराध नहीं किया...मुझे बख्शो न बाबा!

पंडित वैसे ही खड़ा रहा। फिर कहने लगा—बाबूजी, मैं सिनेमा के सब गानों को जानता हूँ। मैं सिनेमा के पास रहता था। सिनेमा के गानों को बिना सुने मेरा एक भी दिन खाली नहीं जाता था। इन गानों के पीछे ही मुझे जेल में आना पड़ा। जब तक पैसा था तब तक अन्दर बैठकर गाना सुनता था बाद को जब वह न रहा तब बाहर से ही खड़े होकर सिनेमा के गानों को सुनता रहा। सिर्फ गानों के शौकने मुझे कैदी बनाया। सिनेमा के प्रति आकर्षण केवल गानों के कारण ही था।

फिर एक लम्बी सांस लेकर कहने लगा—पहले जब मेरे घर के सब कुछ बिक गये और कुछ बेचने लायक न रहा तब

सोचा था कि बस करूं। किन्तु जब जब गानों की बात याद आती रही तब तब मैं पागल सा हो जाता रहा। बड़ा कोशिश की मुझे सिनेमा के फाटक में कोई नौकरी मिले, मगर ढूंढ़ ढूढ़ कर हार गया, दौड़ धूप किया, कोई लाभ नहीं हुआ। फिर क्या करता. मजबूरन दिन भर इधर उधर काम करता और शाम को सिनेमां के फाटक के पास खड़े होकर गानों को सुनता रहता। जिस गाने को एकबार सुन लेता वही याद हो जाता। ठीक जैसा सुना वैसे ही मुझसे सुन लीजिये। चाहे औरत ने गाया हो या मर्द। दिन भर मेहनत करने पर केवल साढ़े तीन आने मजदूरी के मिलते थे उसे खा जाता था। ब्याह शादी की जरूरत नहीं थी किन्तु इसे कैसे छोड़ सकता था।

कहकर जंगले की ओर तिरछी निगाह से देख लिया। फिर कहने लगा—पुलिस वाले कितने बदमाश होते हैं उसे तो आप जानते ही हैं। और सिनेमों के फाटक वाले उससे भी सौ गुने, उसे भला मेरा खड़ा रहना कैसे सहता। दो एक बार मना भी किया, मगर मैं सुनता कैसे ? जेब कतरा है, कहकर पकड़वा दिया। तलाशी में कुछ निकला नहीं फिर भी हरामखोर मजिस्ट्रेट ने १०६ में साल भर के लिये सजा सुना दी। पचीस रुपये की जमानत मांगी गई मगर मेरे लिये जामिन कौन होता। तब से जेल में हूँ। कुछ दिनों तक बगिये में काम करता रहा फिर आप आये। जब से यहीं हूँ ...अब बाबूजी मेरे ऊपर मेहरबानी रक्खियेगा अपनी पनाह में रखियेगा। नहीं तो चक्करों में जाकर चक्की, गारा, कोल्हू या ऐसी ही कोई मशक्कत करनी पड़ेगी...मेरी ता नानी मर जायगी।

मोहित ने कहा—जाओ, जाओ. सो जाओ फिक्र न करो। यहीं रहोगे।

पंडित चला गया। पंडित की कहानी सुनकर मोहित को मासिक पत्र या अन्य पत्रों में लिखी हुई बातों की याद होने लगी। तब क्या हम लोग जिन्हें कहानी समझते हैं वे नाम बदली हुई सत्य घटनायें हैं ?...अहा बेचारा पंडित कितना सीधा आदमी है। सोच सोच कर पंडित के लिये दर्द अनुभव किया। अपने को मन में धिक्कारने लगा। सोचा कि इतने बड़े कलाविद को अभी कुछ समय पहले वह पेशी करवाना चाहता था। बेचारे की कसूर ही क्या थी। केवल गाता ही है न। जिस वाणी, बीणापाणी के आराधना में बड़े बड़े ऋषि अपने जीवन को व्यतीत कर देते हैं उन से क्या यह अवारा कह कर पकड़ा गया कैदी कम है ? जिसके पीछे लोग पागल सा धन दौलत लुटाते हैं वही वाणी की देवी इस गरीब की दासी होते हुये भी इस बेचारे को पचीस रुपयों की जमानत नहीं मिलती। कारावास के विशेष यन्त्रणा को भोग रहा है। पंडित के पुकार को मजिस्ट्रेट ने न सुना। मजिस्ट्रेट के पास तो ये कलाविदों के सर्दार अपने चुराट के राख के बराबर भी नहीं होते। मजिस्ट्रेट लोग साल भर में इसके जमानत के रुपयों के बराबर कितने ही पच्चीस रुपयों के सिगरेटों के राख बना देते हैं, किन्तु केवल पच्चीस रुपयों के विश्वास बिना इस कलाविदों के राजा को खुली हवा में छोड़ नहीं सकते। सिनेमा दिखाकर लोगों से पैसा लूटने वाले या तमाशबीन क्या जाने होंगे कि दरवाजे पर कौन किस रूप में खड़ा रहा। जहाँ लाखों रुपयों का हेरफेर होता रहा वहाँ इस छद्मभेष धारी सरस्वती के दुलारे को किसी को पहचानने की ही क्या जरूरत थी। न तो इसके पास अपनी कला के प्रचार के साधन थे न योग्यता। कला भी तो प्रचार का ही दास हो

गया न। जिसके पास प्रचार के साधन नहीं हैं उसे उसी प्रकार से फटे कम्बल में लिपटे हुए शव के से पड़ा रहना पड़ेगा। यही दुनियाँ की रीत है। एक जूठी बीड़ी के टुकड़े से अधिक उसका इस दुनिया में मूल्य ही क्या है?

सोचते सोचते मोहित की आंखें आंसू से भर गयीं। वह वह छत की कड़ी की ओर देखने लगा।

× × × × ×

मोहित मुंह धोकर बैठा था। पंडित चाय लेकर आया। मोहित चाय की चुसकी लेता जाता था और सोचता जाता था कि यदि पंडित बाहर मिले तो उसका कैसे सतकार करें? कुछ निश्चय कर लिया, फिर पूछा—पंडित बाहर तुम मेरे यहां रहना पसन्द करोगे?

पंडित ने खुश होकर कहा—क्या यह भी मेरे भाग्य में लिखा है?

मोहित ने मुस्कराते हुए पूछा क्या तनख्वाह लोगे?

पंडित खूब साधारण भाव से कहा—मेरा क्या। जैसा तैसा खाने को दीजियेगा तो मेरा काम चलेगा। एक कोने में पड़ा रहूँगा...और...बस, सिनेमा का एक माहवारी पास दिला दीजियेगा...या फाटक के पास खड़े रहने की इजाजत दिला दीजियेगा।

मोहित ने हसते हुए कहा—मगर पहनोगे क्या?

उसके लिये फिक्र न करिये। जेल के फाटक में मेरी एक धोती, कमीज और दो अंगौछे जमा हैं। साल भर के लिये कोई चिन्ता नहीं।

बात सरल हृदय की थी और उसमें सचाई भी थी। मोहित के मन में हुआ कि उस सरल तपस्वी को सर पर उठा

ले। सरलता ने मोहित को मुग्ध कर लिया। काल्पनिक जिसकी कल्पना करते हैं आज उन काल्पनिकों के आराध्य देवता सशरीर मोहित के सामने खड़े थे। केवल पचीस रुपयों के अभाव से साल भर के लिये जेल काट रहे थे पूरे तीन सौ पयसठ दिन यहीं बिताना था।

पंडित चाय पिला कर चला गया। मोहित अखबार में आँख गड़ाने की कोशिश में था। इतने में साहब के बंगले का अर्दली आया। उसे देख कर मोहित ने समझा कि गत रात्रि को जो गन्दे सिनेमा-संगीत हुये हैं उसी के विषय में साहब की कोई ताकीद होगी। किन्तु मोहित आज पंडित के लिए सब कुछ सहने को तैयार था। दुनिया जिन गानों को लाखों रुपये खर्च करके सुनती है उनके लिये मोहित साहब की ताकीद सहने को तैयार था। उसने अरदली से कहा—क्या है ?

अरदली ने पहले झुक झुक कर सलाम किया फिर अपने जेब से एक पत्र निकाल कर दिया। मोहित ने देखा। ऊपर सुन्दर स्पष्ट अक्षरों में लिथा था—कुंवर मोहित नारायण। लिखावट का ढंग औरतों का सा था। पत्र अँग्रेजी में था पत्र को खोल कर पढ़कर के कहा—ठीक है।

अरदली ने झुक झुक कर सलाम किया और चला गया। पत्र इस आशय का था—

महाशय,

न तो मैंने आपको कभी देखा है और न आपने मुझे देखा होगा। केवल आपका नाम ही सुना था। मासिक पत्रों में आपके लिखे हुए कुछ प्रबन्धों को अवश्य पढ़ी हूँ। आपकी लिखी हुई कुछ कविताओं के संग्रह को भी मैंने देखा है। आपके गायन भी दो दिन से सुन रही हूं। देखती हूं कि आप केवल कवि एवं प्रबन्ध लेखक ही नहीं हैं अपितु उच्च कोटि

के गायक भी हैं। अवसर होता तो मैं आपसे कुछ गीत सीखती। तथापि कृपया कुछ गीतों को लिखकर भेज दीजियेगा तो मैं कृतार्थ होऊंगी। और उन्हीं को भेजियेगा जिन्हें कि रात में गाइयेगा। ताकि मैं भी यहाँ से उनके सुरों को पाऊँ। नमस्ते।

कृपया भेजियेगा। वन्दे।

× × ×

पत्र पढ़ते ही मोहित समझ गया कि यही साहब की बेटी है। आखिरी पंक्ति को पढ़कर यह भी समझ गया कि साहब की बेटी चञ्चल भी है। पंडित को बुलाया। हंसते हंसते कहा—लो तुम्हारी शादी तैयार है।

सुन कर पंडित का मुंह सूख गया। आंखें डबडबा उठीं। मोहित डर गया। सोचा, शायद हंसी हंसी में ही उस वृद्ध तपस्वी की कोई पुरानी व्यथा उभर गई हो और वह दुखी हुए हों। भर्राये गले से पंडित ने कहना शुरू किया—बाबूजी मुझे बचाइये। साहब के अरदली को देख कर ही मैं समझ गया था। मुझे चक्कर में न जाने दीजिये। वहां पर मैं मर जाऊँगा। चलिये, साहब से कह दीजिये कि मैं अब कभी भी न गाऊंगा।

मोहित को ढाढ़स बंधी। वह हंस दिया। फिर उसने हंसते हंसते कहा—पागल हो पंडित। जब तक मैं यहां हूं तब तक तुम्हें मेरे साथ रहना है। तुम्हें नहीं जाने दूँगा।

फिर पंडित को मोहित ने समझाया कि साहब की बेटी को कुछ गाने लिख कर भेजना है। पंडित ने जब सब बातें समझ ली तब बोला—ओः। मैंने समझा था कि साहब नाराज हो गया है। बिल्कुल डर गया था। गानों का क्या है। अभी साहब की बेटी ने सुना ही क्या है। एक दिन यहीं पर बुलाइये

फिर देखिये कि मैं क्या क्या सुनाता हूँ। सहगल, के. सी. दे, पहाड़ी सान्याल, पंकज मल्लिक, देविकारानी, रेणुका, भानु-मति, हरिमति सावरमति और सव मति और मताओं के गाने ठीक ठीक वैसीही आवाज में गाकर सुना दूँगा। जो जरा भी गलती हुई तो मेरा कान पकड़ लीजियेगा। यह तो अच्छी बात है....मैंने सोचा था कि साहव का अरदली साहव के सामने मुझे पेश करने के लिये वुलाने आया था। आपने समझा बुझा कर वापस किया। नहीं तो मैं...

आगे कुछ कह न सका। मोहित ने मन-ही-मन कहा—इस आदमी से दुनियाँ में कोई सुर ताल लय छन्द बचा नहीं है?

× × ×

दोपहर को खाना खाने के वाद जब मोहित वैठा उस समय पंडित ने गाना लिख दिया। शाम को अरदली आकर ले गया। रात वाले सिपाही के आने पर फिर गानों का उद्योग चलने लगा। आज मोहित ने आग्रह करके पंडित को अपने खाट पर वैठाया। गाना शुरू हुआ। सव लोग तन्मय थे। साहव की वेटी के लिये भेजे गये गानों को गाने के लिये मोहित ने कहा था, पंडित उन्हीं को गा रहा था। उनमें कुछ औरतों के स्वर के थे कुछ पुरुष के। पंडित ने हुवहू उन्हीं का नकल किया। न सुनने वालों को सुध थी न सुनाने वाले को। क्षण के लिये सव लोग भूल गये थे कि वे कहाँ हैं।

जव लोगों को होश आया तो देखा कि सिपाही जंगले का छड़ पकड़े लटका सा खड़ा है और उसके वगल में रात में आया हुआ हवलदार खड़ा है। शायद दोनों की आँखें तब भी वन्द थीं।

पंडित ने ज्यों आंखें खोल कर सामने हौलदार को देखा त्यों एक छलांग में जाकर अपने बिस्तर पर बैठा। इतना डर गया था कि झट से अपना कम्बल ओढ़ कर लेट गया। मानो वह शाम से ही सो रहा है।

मोहित ने भांप लिया कि पंडित के भय का क्या कारण है। परिस्थिति को साफ करने की मनसा से पूछा—कहिये हवलदार साहब कैसा गाना सुने?

तब भी शायद हवलदार के कानों में पंडित के गाने गूँज रहे थे इससे उसने मोहित के प्रश्न को न सुना मोहित ने फिर से पूछा। अबकी हवलदार ने केवल सर हिलाया। मौका अनुकूल है समझकर मोहित ने कहा—पंडित इनाम देने लायक है। कितनी होशियारी से गाता है।

अबकी हौलदार ने कहा—इसमें भी कोई शक है। मैंने तो अपनी जिन्दगी में ऐसा गाने वाला कभी न देखा है न सुना है। आज यदि पंडित बाहर होता तो मैं उसे अपनी लड़की की शादी में बुलवाता।

कहकर पंडित की ओर मुँह करके बोला—पंडित जी कब छूटोगे?

पंडित ने भी परिस्थिति अनुकूल है समझकर उठ कर के बैठ गया था। उसने कहा—हुजूर अगले चैत में या वैशाख में।

क्या बताऊँ। मेरी लड़की की शादी अगले माघ में है। नहीं तो...

कहकर हवलदार ने जेब से बीड़ी का बन्डल निकाल कर पंडित की ओर फेक दिया। पंडित ने उठकर बन्डल ले लिया फिर हवलदार, सिपाही और पंडित तीनों मिलकर हवलदार की बेटी की शादी कैसे होगी उसमें कहाँ कहाँ से गाने वाले

आएँगे, किस नाचने वाली को बयाना दे दिया गया, आदि के विषय में बातें होने लगीं। मोहित सो गया। मोहित की आँखें तब खुलीं जब पंडित ने चाय बनाकर लाकर कहा—बाबूजी, आज चायपानी नं करियेगा ? क्या तबियत खराब है ?

× × ×

गाने में किसी प्रकार का रोक-टोक नहीं है जब पंडित ने देख लिया तब अक्सर अपने मन में गुनगुनाता रहा। उसकी हिम्मत अब बढ़ चली थी। रोज रात को वे खटके दो चार गाना सुना देता। अब उसके लिये बीड़ी सिगरेट का भी अभाव नहीं था। मतलब यह कि पंडित की सजा मजे में कट रही थी।

पन्द्रह बीस दिन के बाद फिर साहब की बेटी का एक पत्र आया। मोहित ने पंडित को सारा पढ़कर सुना दिया। वह बेचारा पत्र के भावार्थ को क्या समझे थूँक निगल कर कहा—अबकी चन्डीदास के उस गाने को लिख कर भेजिये।

चन्डीदास जानत हैं ज्ञानी प्रेम है अमृत जीवन एक कहानी—

मोहित ने ऐसा ही किया। साथ में इसी प्रकार के और कई संगीत लिख कर भेज दिया। चार पाँच दिन के बाद एक पत्र इस आशय का आया—

कुँवर साहब, बन्दे

आपको पत्र लिखती हूँ, उसके उत्तर में केवल दो चार गाने लिखकर भेजते हैं। क्या इसका अर्थ यह लगाऊं कि आप मेरे अनुरोध की रक्षा करके ही छुटकारा पाना चाहते हैं ?

मैं हू आपही की × × × !

पढ़ते ही मोहित के हृदय में उथलपुथल मच गया। पंडित

के पास पत्र का जिक्र नहीं किया। जिसने पत्र लाया था उसे शामको उत्तर देने का वादा करके वापस किया। अरदली के चले जाने के बाद कई बार पत्र को पढ़ा। पत्र के अक्षर उसके सामने जीवित-मूर्ति सी भासने लगीं। उन्हीं के अन्दर वह किसी को ढूंढ़ने लगा। हृदय में कितने की काल्पनिक मूर्ति आती और जाती रहीं। कहीं पर वह स्थिर नहीं हो पाता था। एक अजीव सी हालत हो गई। पता नहीं कि कहां उसके जेल जीवन की एकान्त-वास की शान्ति उड़ गई। मालूम यह होने लगा कि कोई उसे प्राणपण शक्ति से आकर्षित कर रही है। वेचैन था। कब शाम हुई पता भी न चला।

जब शाम को अरदली ने आकर सलाम किया तब भी उत्तर में क्या लिखना चाहिये कुछ निश्चय न कर पाया था। अन्यमनस्क भाव से अपनी कलम उठायी और सवेरे वाले पत्र के पीछे ही लिख दिया—

आप अपनी फोटो भेजने की कृपा करियेगा?

आप ही का × × ×।

लिफाफा बन्द करके अरदली के हाथ में दे दिया। अरदली सलाम करके लेकर चल दिया।

जब अरदली आंखों के सामने से चला गया तब फिर से पत्र को पढ़ने की इच्छा हुई। किन्तु उस समय वहां पत्र कहां था। अन्यमनस्कता के कारण पत्र तो चला गया था। याद कर पत्र के पंक्तियों का खाका मनमें खींचता रहा। कुछ समय वैसे ही वैठा रहा।

इतने में पंडित आया, कुछ काम था करके चला गया मोहित का ध्यान बटी गया। फिर से जब ध्यान को केन्द्रित करके पत्रके विषय में सोचने लगा तब अचानक उसे कुछ सन्देह हुआ।

ठीक ठीक पत्र के वाक्यों को याद न कर पाया। मनमें उथल पुथल होने लगा। हाय हाय पत्र को क्यों वापस किया? यदि पत्र में ऐसी कोई बात न हो तो? एक दम फोटो मांग बैठना अन्याय तो नहीं हुआ? अरे छी छी उसने यह क्या कर डाला? क्यों नहीं दो दिन और सब्र की?

मोहित के हाथ पैर कांपने लगे। जितना सोचता था कि शायद उसने साहब की बेटी के पत्र का गलती अर्थ लगाया उतना ही वह धैर्य हीन होने लगा। पता नहीं कि पत्र हाथमें पाते ही साहब की बेटी क्या करेगी? यदि गुस्से में आकर साहब से कह दी और साहब ने उसपर कार्रवाही की तो क्या होगा? साहब गुस्से में आकर यदि उसे अखबारों में छपवा देगा तो और भी न जाने क्या होगा? जेल के कैदी सुनेंगे, सिपाही लोग सुनेंगे, शहर वाले सुनेंगे, सारी दुनिया सुनेगी। तब उसके लिये आत्महत्या के अलावा और कोई उपाय न रहेगा।

चुप चाप बैठा रहा। शाम को घूमना भी न हुआ। जेल कब बन्द हुआ उसका भी पता न था। आफत के बादल छाये हुए थे। मोहित निस्तब्ध था, भीत था, चिन्तित था अपने मनमें अपने अदूर-भविष्य का एक भयावना चित्र खींच रहा था। आने वाले दिनों की एक भयावह मूर्त्ति उसे रह रह कर डरा रही थी।

पंडित ने अपने समय पर खाने के लिये पूछा। आज पंडित को देखकर मोहित के मनमें घृणा का संचार हुवा। वह सोचने लगा कि इसी के कारण यह सब हुवा। उसकी प्रसिद्धी के सूर्य को अस्त कराने वाला यही पंडित है। यही उसके सर्वनाश का कारण है। उसके दिल में आया कि पंडित को एक थप्पड़ जमा देवें किन्तु कुछ सोचकर अपने को रोका। उसे चुप रहते देख-

कर डितने कहा – बाबूजी चलिये खाना तैयार है।

उत्तेजित सा मोहित ने कहा—ना ! ना ! ना !

पंडित स्वभावतः डरपोंक था ही मोहित को इतना उत्तेजित देखकर चुपचाप जा करके अपने बिस्तर पर बैठ गया। मन ही मन भावी विपत्ति को सोचने लगा। एक तो कारागार के कठिन नियमावली ने उसे नपुंसक बनाकर ही रक्खा था। उसके लिये किसी कैदी की धमकी ही पर्याप्त था तिसपर 'ए' क्लास के बाबू की धमकी का क्या पूछना फिर से वह पूछता ही कैसे कि बाबूजी का आज खाना पीना होगा या नहीं।

न तो मोहित को ही खाने पीने के विपय में सोचने की फुरसत थी और न पंडित में पूछने की हिम्मत, फल स्वरूप वह रात वैसे ही कट गई। सब अपने अपने बिस्तर पर चिन्तित से सो गये।

सवेरे जब मोहित को जगाया गया तो उसने देखा कि जेल का डाक्टर सरहाने खड़ा है एवं कम्पाउन्डर साहब मुंह थर्मामीटर डालने के इन्तजारी में हैं।

मोहित तो अवाक उठकर बैठने गया। डाक्टर ने मना किया। फिर कम्पाउन्डरने मोहित के मुंन में थरमामिटर डाला। ज्वर वर कुछ था नहीं। फिर भी सावधानी के लिये एक नाप डोज नं०—३' पिला दी। कहते हैं कि इस 'डोज न—३' में ऐसी आलौकिक शक्ति है कि रक्त आमाशय से लेकर सन्निपात के आस पास या दूर-सुदूर के एक हजार आठ बीमारियों का विनाश करता है। फिर ऐसी दवा पीकर मोहित अच्छा क्यों न हो ? डाक्टर का जाना था कि मोहित भी उठकर खड़ा हुआ। नहाया धोया खाना खाया। खाते खाते पंडित से पता चला कि 'डोज नं—३' के मूल में पंडित का ही हाथ था।

पंडित के ही रात भर में दस वार रिपोर्ट बढ़ाने के फलस्वरूप डाक्टर साहब फुर्सत से सवेरे आये थे।

खाना खाकर आके बैठा ही होगा कि साहब का अरदली आया। झुक झुक कर सलाम करके मोहित के हाथ में एक बन्द लिफाफा दिया। आज का लिफाफा अपेक्षाकृत बड़ा था और भारी था। मोहित ने लिफाफे को लेकर कहा—ठीक है।

अरदली सलाम करके चला गया। बाद को एकान्त में मोहित ने लिफाफे को खोला। एक मास पहले ली गई साहब की बेटी की तस्वीर थी, नीचे लिखा था—प्रिय मोहित नारायण को।

× × ×

मोहित को कुल तीन महीने की सजा थी। साहब की बेटी के साथ पत्र का आदान-प्रदान करने में ही उसके बाकी दिन कट गये। एक दिन अखबारों में छपा—नवयुवकों के हृदय सम्राट, ब्रिटिश साम्राज्यशाही के त्रास-स्वरूप, जिन्दाशहीद कुँवर मोहित नरायण जी छूट रहे हैं। सोमवार को सवेरे आठ बजे उनका शानदार स्वागत करना है। सभी लोगों से प्रार्थना है कि वे जेल के फाटक पर उक्त समय पर हाजिर हों। शाम को चार बजे उन्हीं के नाम के पार्क में भारी सभा होगी। बाहर से भी कुछ बड़े बड़े नेता उनके स्वागत में आयेंगे—संयोयक × × ×।

सोमवार को दिन निकलने से पहले ही हजारों के तादाद में लोग जेल के सामने एकत्रित होने लगे। आठ बजते बजते लाखों के तादाद में लोग एकत्रित हो गये। रह रह कुंवर मोहित नरायण के जै जै कार से आकाश गूंज उठा। किसी के हाथ में तिरंगा झंडा तो किसी के हाथ में फूलों की टोकरी तो किसी के हाथ में चन्दन या कपूर का माला। उधर फाटक के पास

ही औरतों की टोली राष्ट्रीय गाने गाती रही कभी कभी नारा भी लगाती रही। महिला विद्यालयों की छात्राएँ सलामी देने के लिये एक सी साड़ी पहने खड़ी रहीं। लोग कुंवर साहब को पाने के लिये पागल थे।

इतने ही में जेल का बड़ा साहब फाटक के अन्दर घुसा। अब कुंवर साहब आयेंगे। जनता बिल्कुल पागल हो गई। नारों के मारे लोगों के कान बहरे होने लगे। इतने में मोहित को लेकर बड़े साहब फाटक पर आये। नव युवकों ने जय जय कार के साथ मोहित को कन्धे पर चढ़ा लिया। चारों ओर से फूल की वर्षा होने लगी। लोग प्राणपण शक्ति से चिल्लाने लगे, झन्डे लहराने लगे।

फिर लोगोंने मोहित को उसको मोटर तक कन्धे पर ही ले गये। मोहित की बहन स्वयं अपने हाथ से मोटर चलायगी। वह भी सिल्क की त्रिरंगा-साड़ी पहने थी।

मोटर के हुड पर चढ़कर मोहित ने एक छोटा सा भाषण दिया। लोग करतालों से उसका स्वागत किये। फिर जय जय कार के अन्दर से उसकी मोटर आगे बढ़ी। पीछे पीछे सैंकड़ों स्वागत करने वालों की मोटरें चलीं। सभी पर त्रिरंगा झन्डा लहरा रहा था।

उधर घर पर भी मुहल्ले टोले की बहुएं कम न आई थीं। मोहित की मोटर घर पर पहुँचते ही मोहित की माँ आकर आँसू भरे नयनों से लड़के को गले लगा लीं। औरतें शंख ध्वनि कर उठीं। कुछेक तो थाली में फूल चन्दन माला आदि लेकर, आरती उतार कर के पैरों को चूम लीं। मोहित आज वनवास से आया था, उसे राम से कम उसके पुरवासियों को खातिर न करनी थी।

दिन भर यही चलता रहा। भले ही उसका वजन पहले से पांचसेर बढ़ा हो किन्तु जनता की आंखों में वह सूख कर कांटा हो गया था। अपनी खातिर देख कर उसे अपने को मन में भले ही खूब प्रसन्नता हुई हो किन्तु वह तो और लोगों के लिये स्थिर प्रश्न था। वह आज त्यागी था। चाहे उसने कितनी ही खतकितावत जेल में साहब की बेटी से क्यों न की हो। उसे तो देश के लिये जेल जाना पड़ा न 'ए' क्लास में रहा तो क्या, आखिर ऐसे भी तो लखपती का लड़का है। कहते हैं कि उसके चौदह पुरखों में कभी किसी ने सिल्क मलमल के अलावा कुछ नहीं पहना, किन्तु वह ऐसा महात्मा पुरुष था कि खद्दर के अलावा कुछ पहनता नहीं था। खद्दर तो खद्दर ही है चाहे वह कितना ही महीन हो।

शाम को लाखों आदमी सभा में आकर दो घन्टे से इन्तजार कर रहे हैं। इसकी खबर जब लगी तब वह सबकुछ छोड़ कर वहां पहुँचा। जैसे कार के अन्दर से वह जाकर मञ्चपर खड़ा हुआ। सब लोग जब शान्त हुये तो उसका भाषण शुरू हुआ। उसके समान भाषण कौन दे सकता था। लिखा पढ़ा, तिसपर वैरिष्टर। बोलने का आदर्श लेकर उसने सरस्वती के मन्दिर में पैर ही रखा था। न यहाँ बोलता कचहरी में किसी की ओर से किराये पर जा कर बोलता। फिर जब जनता ने इतना किराया दिया तब भी न बोले? धूआ धार बोला। लोग भूमने लगे। वृटिश साम्राज्यशाही के चौदह पुरखों के श्राद्ध से लेकर गरीब किसान मजदूर के लिये जीवन-योवन धन-दौलत सर्वस्व स्वाहा कर दिया। आध घन्टे के अन्दर सब कुछ हो भी गया और वह वापस भी लोगों के सामने आ गया।

सब लोग जय जय कार करने लगे। इतने में मञ्चपर एक वालन्टियर आया। उसने हाथ उठा कर सबको शान्त होने के लिये कहा। सब लोग शान्त हुए। वालन्टियर ने सीढ़ी की ओर देखा। साथ साथ एक युवती सीढ़ी पर से ऊपर आई। उसके हाथ में एक रत्न-हार थी। मोहित के गले में डाल कर साष्टांग प्रणाम की, पीछे ही जेल के बड़े साहब खड़े थे।

लोग जै जै कार कर उठे। आपस में बात करने लगे—देखो हमारे नेता के व्यक्तित्व पर मुग्ध होकर यह सरकारी अफसर की लड़की का कैसा हृदय परिवर्तन हो गया। देखो उस लड़की ने रत्न-हार चढ़ाई। साथ में उसके पिता भी आये।

मोहित की आंखें बन्द हो गई। उसकी आंखों के सामने फटे कम्बल में लिपटा जाड़े में ठिठुरता हुआ पंडित नाच रहा था। केवल उसका दिल ही इस बात का गवाह था कि इस सन्मान का सच्चा अधिकारी वह है या कौन?

लोग तब भी जै जै कार से संसार को गुंजा रक्खे थे।

आंखें खोल कर जब जनता की ओर देखा तो उसे लगा कि उसके रत्न-हारकी ओरही दुनियाँ आंख गड़ाये है। वह महान है।

नाम ।

जहाज जब गंगाकी छाती चीरता हुआ समुद्र में पदार्पण करने की तैयारी कर रहा था ठीक उसी समय दिवाकर भी अस्ताचल में प्रवेश करने की तैयारी कर रहे थे । यात्री लोग संगम का दृश्य जहाज के ऊपर खड़े होकर देख रहे थे । डेक् पर काफी चहल पहल थी ।

एक ओर खड़े खड़े अनिल भी सूर्य के अस्ताचल गमन को निहार रहा था । यों तो पहली बार जब किसी को जहाज में चढ़ने का मौका मिलता है तो वह हरेक चीज को खूब सावधानी तथा आग्रह के साथ निरीक्षण करता है किन्तु अनिल में उनके कोई भी लक्षण नहीं दिखाई पड़ते थे । वह तो केवल सूर्य की ओर आँख किये खड़ा था । अगल बगल में और भी बहुत से आदमी थे' आपस में कहते भी—देखो दिवाकर की शोभा, किन्तु अनिल की जबान में ताला पड़ा था । केवल, शोभा' नाम गूँज रहा था । रह रहकर दीर्घ निश्वास लेता और अस्ताचल गामी दिवाकर के रक्तिम छटाओं के साथ अपनी आराध्य देवी के गालकी लालित्य के साथ तुलना कर लेता । दिवाकर जब बिल्कुल अदृश्य हो गये तब अनिल के हृदय की व्याकुलता सुदीर्घ निःश्वास में परिणत हुई । मन ही मन कहता था कि जाकर दिवाकर के चरणों में पड़ जावे एवं बार बार अनुरोध करे भगवन ! आज न जाओ ! न जाओ ! जब से सृष्टि के क्रम चले हैं तब से तो नित्य ही एकबार जाते हो किन्तु यदि आज एकदिन के लिये न जाओगे तो कौन सा सृष्टि के क्रम में व्यतिक्रम होगा ! केवल एक दिन के लिये अनुरोधी की रक्षा करो ।

आजतक अनिल जैसे कितने ही आये होंगे और गये भी होंगे किन्तु क्या कभी किसी ने सृष्टि के क्रम में व्यतिक्रम करा पाया। दिवाकर को जहाँ जाना था वहाँ चले गये केवल अनिल ही अपने स्थान पर खड़ा रहा।

जहाज ने भी स्थान परिवर्तन किया। शुभ्र वस्त्र को त्यज कर नीलाम्बरी को ग्रहण किया। जो लोग दिवाकर के अस्ताचलगमन को देखने आये थे वे भी धीरे धीरे एकएक कर खिसकने लगे। अपने नियत स्थान पर पहुंच कर कैसे भली भाँति दिन कट जाय उसकी व्यवस्था करने लगे। केवल अनिल ही अपने स्थान पर पत्थर की मूर्ति सा खड़ा रहा। मानों वही उसका प्रोग्राम हो। शान्त, स्थिर, अचल, अटल आँखें दिवाकर के अस्ताचल गामी पथ का अनुसरण कर रही थीं।

इसी प्रकार से कितना समय बीता, कितने बजे, इसका उसे कोई ज्ञान नहीं। एक बच्चा खलासी ने आकर उसे हिलाया, कहा—बाबू जी।

अनिल का जैसे निद्रा भंग हुआ। चौंक उठा, पूछना ही चाहता था कि रात कितनी हुई; इतने में बच्चा खलासी ने कहा—बाबूजी आपको मैं कबसे यहीं पर खड़े देख रहा हुँ... कईबार पुकारा भी...क्या आप खड़े खड़े सो गये थे ?

इतने प्रश्नों का एक साथ कैसे उत्तर देता। चुपचाप डेकपर से उतर कर अपने केबिन् की ओर चला। पाँव लड़खड़ाते रहे। प्रतिपद विक्षेप के साथ उसके हृदय में उसकी आराध्यदेवी की विदा-दान कालीन मूर्ति का उदय होता। रसना से कहता—शोभा ! शोभा !! मेरी रानी ! मेरी आराध्य देवी .....भूलना मत ! मैं विलायत से वापस आते ही तुम्हें हृदय से लगा लूँगा।

× × × ×

केबिन् के दरवाजे पर उसी की प्रतीक्षा में 'बाय, खड़ा था। देखते ही सलाम करके दरवाजा खोल दिया। केवल एक सीट रिजर्व कराया था और वह केबिन् दो सीट वाला था। बाय ने पहले ही से सब सामान ठीक करके रक्खा था। जब अनिल आकर खड़ा हुआ तब बाय भी आकर काम में हाथ बंटाने लगा। अभी उसे यह भी देखने की फुर्सत नहीं थी कि उस केबिन में और कोई है या नहीं। हृदयको 'शोभा' के चिन्तन से फुर्सत न थी और इन्द्रियां को काम से।

कुछ अन्य मनस्क सा जब अनिल सोडे की बोतलों को ऊपर के रैक में रख रहा था उस समय अचानक उसके हाथ से एक बोतल छूट गई। बोतल का गिरना था कि नारी कण्ठ की—आह की आवाज हुई। अनिल की निगाह उधर गई। सर्वनाश! बिल्कुल सर के मध्यस्थल में चोट आई। साथ साथ खून की धार। अनिल भागा हुवा उधर गया और बाय से बोला—दौड़ कर डाक्टर को बुला लाओ।

बाय डाक्टर के लिये भागा और अनिल शुश्रुषा में लगा। डाक्टर आया। नारी बेहोश थी। पट्टी वगैरह ठीक से बंध गयी। डाक्टर ने रिपोर्ट लिखा। अनिल उस औरत का नाम धाम भी नहीं जानता था और न उसे कभी देखा ही था। किन्तु सेवा करना मानव का कर्त्तव्य है सेवा में लगा था।

जब होश आया तो औरत ने पूछा—मैं कहाँ हूँ?

अनिल थूंक का घूट निगलते हुए कहा—आप जहाज् के अस्पताल में हैं।

औरत कुछ समय तक चुप रही, फिर बोली—मद्रास आने में कितना समय है?

अभी समय है।...क्या आप मद्रास में ही उतरियेगा?

औरत करवट लेती हुई बोली—नहीं। मुझे विलायत जाना है।

मगर आपकी तबियत बहुत खराब है। डाक्टर ने कहा है विश्राम करने के लिये, यदि आपका कोई मद्रास में हो तो बताइये। मैं उतरते ही तार कर दूँगा।

नहीं। मेरा मद्रास में कोई नहीं है। आपको कष्ट न करना पड़ेगा।

मगर डाक्टर कह रहे थे कि एक महीने से कम में आपकी चोट अच्छी न होगी और इस अवस्था में जहाज की सैर ठीक न होगी।

नहीं, नहीं, वह असम्भव है। मुझे इसी जहाज से विलायत पहुँचना है।

कहकर औरत अनिल की ओर पीठ घुमाकर लेट गई। अनिल ने धीरे धीरे हाथ लगाकर औरत के शरीर के उत्ताप को अन्दाजा। उस समय भी बुखार का जोर था। आहिस्ते आहिस्ते कम्बल को ठीक से उढ़ादी।

रातभर जागने और ऊपर से दिन भर रोगी के पास रहने के कारण अनिल बिल्कुल थक गया था। डाक्टर की सख्त ताकीद थी कि मद्रास में उतर कर ही इनके घरवालों से कहियेगा कि इन्हें ले जायं। आगे का जिम्मा डाक्टर लेने को कतई तैयार नहीं थे। औरत के सज्ञान होने का रास्ता देखते ही अनिल को इतना परेशान होना पड़ा था। किन्तु अब परेशानी और बढ़ गई।

× × × ×

मद्रास के पास आते ही जहाज सीटी पर सीटी बजाने लगा। वहां पर उतरने वाले अपना सामान ठीक करने लगे।

जहाज का डाक्टर आया। औरत के शरीर की उत्ताप देखकर डाक्टर ने कहा—इन्हें यहां से तीर तक मेरे ही आदमी पहुँचा देंगे। फिर ज्यों ही इनके घर के आदमी आजाएंगे इन्हें बड़े अस्पताल पहुंचा दीजियेगा। ज्यादा देर अस्पताल से दूर रखना ठीक नहीं है।

अनिल ने डाक्टर से औरत की बात कह दी। डाक्टर ने यह सुनकर कहा—ऐसा हो नहीं सकता है। मैंने केवल फर्स्ट-एड की मदद पहुँचायी है। हो सकता है कि सिलाई आदि करना पड़े। घाव बड़ा है कहीं रोगी उसी में गड़बड़ा जाय तो जिम्मेदारी कौन लेगा?

सुन कर अनिल भी घवड़ाया। कारण उस चोट के मूल में उसी की असावधानी थी। उसने डाक्टर से कहा—जरा आप ही समझा दीजिये।

औरत से डाक्टर की बात चीत हुई। किसी प्रकार से भी इस जहाज को छोड़ने के लिये वह तैयार न हुई। आखिर अनिल एवं डाक्टर में परामर्श हुआ। डाक्टर ने जाकर समझाया। किन्तु किसी प्रकार से भी जब औरत मानने को तैयार न हुई तब डाक्टर ने कहा—मगर मैं आपको अपनी जिम्मेदारी पर नहीं ले जा सकता हूँ। आपको मद्रास के पुलिस के सुपुर्द करूँगा, उसकी जहाँ खुशी ले जायगा।

औरत उत्तेजित हो कर बोली—जैसा चाहे करिये।

औरत की अवस्था नाजुक है देखकर डाक्टर ने अधिक बात करना ठीक न समझा। बाहर आकर अनिल से परामर्श किया। तब यह हुआ कि अनिल भी उस औरत के साथ उतर जायगा एवं औरत के घर तार देगा। जब तक घरवाले न आएँगे तब तक वही उसके पास रहेगा। डाक्टर ने

आश्वासन देते हुए कहा–यदि आप दूसरा जहाज आने के समय तक देखिये कि उस औरत के घर से कोई आता नहीं तो आप उसे छोड़ कर चले जाइयेगा तब तक खतरे का समय निकल जायगा।

कैदी लोग जिस प्रकार से मच्छड़ से भरी कोठरी में रहने से इनकार नहीं कर सकते हैं उसी प्रकार अनिल से भी इनकार नहीं किया गया।

× × × ×

तीन दिन के बाद औरत उठ बैठी। टाका लगाने की जरूरत न हुई। केवल अनिल को दिन रात हाजिरी देनी पड़ी थी। आज औरत स्वस्थ जैसी बातें कर रही थी। दिमाग ठीक था। प्रथम बातचीत से ही पता चल गया था कि खूब मिलनसार है। पिछले कई दिनों की बात चीत सुनकर अनिल को धन्यवाद देती हुई बोली—आपने बड़ा कष्ट किया नहीं तो न मालूम क्या होता।

अनिल लज्जित हुआ, फिर बोला—आखिर मुझसे जब गलती हुई तो उसे मुझ ही को सुधारना था। मैंने अपनी गलती के प्रायश्चित स्वरूप सब कुछ किया।

ठीक किया आपने मगर मुझे छोड़ कर अकेले न चले जाइयेगा।

अनिल सर खुजलाने लगा देख कर औरत बोली—आप मनमें कहते होंगे कि यह कैसे सम्भव है? ..है कि नहीं?

नहीं। ठीक वह बात नहीं, मगर...मगर मुझे देर होने पर आक्सफोर्ड में जगह नहीं मिलेगी। मेरा विलायत जाना व्यर्थ होगा।

कुछ सोच कर औरत बोली–ठीक है।

कहकर वह ऐसी गम्भीर हो गई कि अनिल क्या बात करे कुछ समझ न पाया। कुछ देर तक वैसे ही बैठे रह कर उठ गया। औरत चुपचाप लेटी रही।

उसके बाद जब दवा पिलाने का समय आया तो अनिल दवा लेकर आया, मुँह बनाती हुई औरत बोली—आप अभी तक गये क्यों नहीं...क्या दवा पिलाने वाली नर्सों की यहाँ कमी है? क्यों आप अपना मूल्यवान समय खराब कर रहे हैं?

कहकर दवा अनिल के हाथ से ले कर फेंक दी। फिर बोली—जाइये।

एक तो कई दिनों से रोगी के सरहाने खड़ा रहना, दूसरा शोभा से प्रतिज्ञा कर आना कि मद्रास में उतर कर ही उसे खत भेजेगा जिसका उल्लेख, तीसरा विलायत में जाने के रास्ते में ही छींक, चौथा औरत की रुलाई; सब मिलकर उसे उलझन में डाल दिया। उसका जीवन दूभर हो गया था। क्या करे कुछ ठीक नहीं कर पा रहा था। धीरे धीरे चला गया उसके मन में प्रतिक्रिया हुई। वह सोचने लगा कि आखिर यह औरत मेरी है कौन कि मैं उसकी इतनी परवाह करूँ? इसी भावना से वह सारा दिन उस औरत के पास गया भी नहीं। देखते देखते शाम हो गई वह जाकर सो गया।

सवेरे तक उसका कोई पता न था। सवेरे जब नींद खुली तो उसने अपने को खूब हल्का पाया। जल्दी जल्दी उठ कर हाथ मुँह धो लिया। शाम को जाना है। आज ही दूसरा जहाज विलायत के लिये रवाना होगा। झटपट सब तैयारी कर ली। जब सब काम ठीक कर लिया तब सोचा कि एक बार उस औरत से मुलाकात कर लेवे। शायद उसका भी कोई काम हो। कम से कम अब भी इतना तो कर ही सकता है।

किसी से कुछ कहना हो तो जाकर विलायत में कह ही सक...

जब उस औरत के पास अनिल पहुँचा तो देखा कि... स्वच्छन्द हो कर नर्सों से बातें कर रही है। अपरा... मुँह बनाये अनिल ने कहा--मैं आया हूँ।

आये हैं तो अच्छा है। बैठिये। मेरे लायक कोई काम ?

कहकर औरत ने नर्सों की ओर देखा। स्वर में जरा भ... मिठास न थी। अनिल बैठ गया। फिर आहिस्ते आ... बना बना कर बोला—मैं विलायत के लिये आज ही जहाज रवाना हो रहा हूँ। यदि वहाँ पर करने लायक आपका को... काम हो...यानी किसी से कुछ कहना, मिलना जुलना...या ऐसा ही...

आगे कुछ कहने से पहने ही औरत बोल उठी—समझ गई।

कहकर उधर रक्खे हुये एक चमड़े के बक्स की ओर उँगली उठा कर बोली--उसे उठा लाइये।

अनिल उसे उठा लाया। ऊपर के ढक्कन को खोलने के लिये उस औरत ने एक नर्स से कहा। खाकी कपड़े के ढक्कन को नर्स ने खोला। बक्सों के ऊपर लिखा था Dr. Miss sova Dutt. नाम पढ़ते ही अनिल चौंक उठा। उसके मुँह से निकल गया--आप भी डाक्टर मिस् शोभादत्त हैं ?

औरत चकित हो कर अनिल की ओर देख कर बोली—आप भी ? आपभी का क्या अर्थ है ? क्या आप दो चार डाक्टर मिस् शोभा दत्त को जानते हैं क्या ?

हाँ, मैं और एक को जानता हूँ ....और एक को जानता हूँ।

कहते कहते अनिल के हृदय में उथल-पुथल होने लगी। वह अन्यमनस्क सा हो गया। एक चलबली नर्स दूसरी नर्स